ISSN-0970-6518

हरियाणा खेती

वर्ष 52 अंक 11

स्वर्ण-जयंती वर्ष
2 फरवरी 2019 - 1 फरवरी 2020

वार्षिक चंदा ₹ 150 नवम्बर 2019 आजीवन सदस्यता ₹ 1500

प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. (2) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित

© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 52 | नवम्बर 2019 | अंक 11

इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
गेहूं की अगेती बिजाई में सावधानियां	यश पाल सिंह सोलंकी, मीना सिवाच एवं जगत सिंह	1
कीटनाशक रसायनों का सुरक्षित प्रयोग	जयलाल यादव एवं नरेन्द्र सिंह	2
रबी फसलों में दीमक से बचाव हेतु बीज उपचार	जयलाल यादव एवं रमेश कुमार	3
मेथी की उन्नत उत्पादन तकनीक	ईशा, सतबीर सिंह पूनिया एवं टोडरमल	4
पॉलीहाऊस में खीरा की व्यावसायिक खेती	राजेश कुमार, विकास कुमार शर्मा एवं गगन मेहता	4
चना उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं	रमेश कुमार, अशोक ढिल्लों एवं जयलाल यादव	5
मृदा स्वास्थ्य कार्ड	चरण सिंह, राम प्रकाश एवं सीमा	6
नींबू वर्गीय पौधों के रोग व निदान	राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण	7
पैदावार बढ़ाने हेतु : उर्वरकों का सही उपयोग	राकेश कुमार, विकास एवं मनोज कुमार शर्मा	8
जड़ वाली सब्जियों की काश्त : कीटों व बीमारियों से बचाव	अमित कुमार, नरेंदर सिंह एवं बलबीर सिंह	9
अजोला – चारा उत्पादन एवं उपयोगिता	राजेश कुमार आर्य, सतपाल एवं निशा	9
फल व सब्जियों का जीवन में महत्त्व	सुरेंद्र सिंह, आर.एस.सैनी एवं मुकेश कुमार	10
फसल अवशेष जलाना : दुष्प्रभाव एवं प्रबन्धन	सूबेसिंह, प्रदीप कुमार चहल एवं भरत सिंह घणघस	11
कृषि अवशेष : गत्ता कैसे बनाएं	कनिष्क वर्मा, प्रमोद शर्मा एवं वाई. के. यादव	12
बारानी क्षेत्रों में सरसों की वैज्ञानिक खेती	कुलदीप सिंह, अमित कुमार एवं सुरेंद्र कुमार शर्मा	19
सहजन : कृषि वानिकी उपयोगी पेड़ व इसकी विशेषताएं	बलवान सिंह मंडल, नीलम मंडल एंव अनील कुमार	20
पौधों द्वारा भारी धातुओं के प्रदूषण का समाधान	प्रतिभा, सोनाली एवं सुषमा शर्मा	22
फसल अवशेष जलाने से समस्या एवं समाधान	मनजीत, जोगिन्दर सिंह मलिक एवं सूबे सिंह	23
गर्भावस्था के दौरान – क्या न करें	सुमित श्योराण, बिमला ढांड़ा एवं कृष्णा दुहन	25
वस्त्रों की सजावट: डिज़ाइन एवं तकनीक	ज़ेबा जमाल एवं निशा आर्य	25
किसानों की आय दोगुना करने में – आधुनिक कृषि पद्धतियों का योगदान	अनिल कुमार मलिक, सूबे सिंह एवं सुनील कुमार	26
धान की पराली से जैविक खाद	बलजीत सिंह सहारण, जगदीश प्रशाद एवं सरिता रानी	27
तिल – शरीर सृजनहार	नीता कुमारी, संगीता सी. सिंधु एवं प्रदीप कुमार चहल	28
पॉली हाऊस लगायें – आमदनी बढ़ायें	जगत सिंह, मीना सिवाच एवं विजयपाल पंघाल	28
Wheat Diseases and their Management	Rajender Singh and H. S. Saharan	29
Happy Seeder : Operating Instructions	Pooja Rani, Sube Singh and Anil Saroha	30
Quality Seed to Raise Socio-economic Standard of Farmers	Sunil Kumar, Anil Kumar Malik and S. S. Jakhar	31
Quality Seed Production of Wheat	Y. P. S. Solanki, Meena Siwach and Jagat Singh	32
स्थाई स्तम्भ : दिसम्बर मास के कृषि कार्य		**13**

तकनीकी सलाहकार
डॉ. आर. एस. हुड्डा
निदेशक, विस्तार शिक्षा

सह-निदेशक (प्रकाशन)
डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक
डॉ. सुषमा आनंद
सह-निदेशक (हिन्दी)

संकलन
डॉ. सूबे सिंह
सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

सम्पादक (अंग्रेजी)
सुनीता सांगवान
प्रकाशन अनुभाग

डीटीपी एवं आवरण सज्जा
राजेश कुमार
प्रकाशन अनुभाग

गेहूं की अगेती बिजाई में सावधानियां

- **यश पाल सिंह सोलंकी, मीना सिवाच एवं जगत सिंह**
कृषि विज्ञान केंद्र, रोहतक
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बहुत से किसान ऐसे हैं जिनके पास सिंचाई के साधन बिल्कुल ही नहीं है और उन्हें केवल वर्षा पर ही निर्भर रहना पड़ता है। उनके लिए गेहूं की सी-306 व डब्ल्यू एच 1025 किस्मों की सिफारिश की गई है। अगेती बिजाई का समय 25 अक्तूबर से 7 नवम्बर तक है। गेहूं की अगेती बिजाई से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए किसानों को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

उपयुक्त किस्में

सी 306 : यह एक देसी व लम्बी बढ़ने वाली (120-135 सैं.मी.) किस्म है। जिसमें फुटाव अधिक होता है। इसका दाना मध्यम आकार का, सख्त, शरबती व चमकीला होता है। चपाती बनाने के लिए यह सबसे अच्छी किस्म है। इसकी औसत उपज 25 मन प्रति एकड़ है। लेकिन यह रतुआ व खुली कांगियारी के लिए रोगग्राही है।

डब्ल्यू एच 1025 : यह एक बौनी (100 सैं.मी.) व मज़बूत तने वाली किस्म है। यह अधिक फुटाव वाली व रतुआ रोग अवरोधी किस्म है। इसका दाना मध्यम आकार का व शरबती रंग का होता है। इसकी चपाती भी अच्छी बनती है। इसकी औसत उपज 28 मन प्रति एकड़ (बारानी) है जबकि सिंचित क्षेत्रों में 40 मन प्रति एकड़ है। यह किस्म खेत में गिरती नहीं है।

बारानी व कम सिंचाई वाले क्षेत्रों के लिए गेहूं की एक नई किस्म डब्ल्यू एच 1142 की बिजाई करने की सिफारिश की गई है। इस किस्म के दाने शरबती, सख्त तथा मध्यम आकार के होते हैं। यह किस्म खेत में गिरती नहीं है। यह सूखे को सह सकती है तथा इस किस्म की पैदावार भी अच्छी है।

बारानी क्षेत्रों में नमी का संरक्षण करना बहुत आवश्यक है ताकि बिजाई के समय उचित मात्रा में नमी मिल सके। हरी खाद के प्रयोग से नमी का संरक्षण व उर्वरता को और बढ़ाया जा सकता है।

बीज की मात्रा

- छोटे आकार के बीज वाली किस्मों का बीज 40-50 किलो प्रति एकड़ डालें।
- मोटे दाने वाली किस्मों का बीज 50-60 किलो प्रति एकड़ डालें।
- बारानी हालात में अंकुरण की समस्या के कारण बीज दर 10% अधिक रखें।

बीज व बीज उपचार

- हमेशा साफ, स्वस्थ व शुद्ध बीज का प्रयोग करना चाहिए।
- बीज का जमाव 85% से कम नहीं होना चाहिए।
- फसल को दीमक से बचाने के लिए बिजाई से पहले क्लोरोपायरीफॉस (20 ई.सी.) 60 मि.ली. या फारमोथियान (25 ई.सी.) 100 मि.ली. को पानी में मिलाकर 2 लीटर घोल बनायें और 40 किलो बीज को उपचारित करें।
- खुली कांगियारी से बचाव के लिए 2 ग्राम विटावैक्स या बाविस्टीन/किलो बीज से उपचारित करें।
- तरल जीवाणु खाद के लिए एजोटोबैक्टर (200 मि.ली.) व पी.एस.बी. (200 मि.ली.) प्रति 40 किलो बीज का प्रयोग करें।

बिजाई का तरीका

- बिजाई हमेशा अच्छे बत्तर में करें। सीड एवं फर्टिलाईज़र ड्रिल से बिजाई करना सर्वोत्तम है।
- दो कतारों का अन्तर 8 इंच रखना चाहिए।
- लम्बी बढ़ने वाली किस्म सी-306 की बिजाई 6-7 सैं.मी. गहरी की जा सकती है।
- अन्य किस्मों की बिजाई 5-6 सैं.मी. गहरी करनी चाहिए।

खाद की मात्रा

- मिट्टी की जांच के अनुसार संतुलित खादों का प्रयोग करें।
- बौनी किस्मों (सिंचित दशा) में क्रमशः शुद्ध नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश तथा ज़िंक की मात्रा 60, 24, 12 तथा 10 किलोग्राम/एकड़ है।
- देसी किस्मों में क्रमशः शुद्ध नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश तथा ज़िंक की मात्रा 24, 12, 6 तथा 10 किलोग्राम/एकड़ डालें।
- नत्रजन की आधी मात्रा तथा अन्य खादों की पूरी मात्रा बिजाई के समय डालें।
- नत्रजन का शेष भाग पहली सिंचाई के साथ दें।
- बारानी दशा में क्रमशः शुद्ध नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा ज़िंक की मात्रा 12, 6, 0 तथा 0 किलोग्राम/ एकड़ डालें।
- बारानी दशा में सभी खादें बिजाई के समय डालें।
- सिंचित दशा में 50 किलोग्राम डी.ए.पी. तथा 110 किलोग्राम यूरिया (अथवा 150 किलोग्राम सिंगल सुपरफास्फेट तथा 130 किलोग्राम यूरिया), 20 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश व 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ काफी है।
- गेहूं की बिजाई से पहले 6 टन गोबर की खाद या 2 टन वर्मी कम्पोस्ट प्रति एकड़ डालें।

सिंचाई

- पानी की उपलब्धता के अनुसार सिंचाई करें।
- पहली सिंचाई बिजाई के 20-22 दिन बाद बहुत आवश्यक है।
- जहां भूमिगत जल स्तर ऊंचा हो वहां गेहूं में 1-2 सिंचाइयां करें। [

किसानों के लिए आवश्यक सूचना

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने 8 अगस्त, 2018 को SO.3951(ई) के तहत एक सूचना जारी की है कि 12 कीटनाशक (इनसेक्टिसाइड्स+ फंजीसाइड्स+हर्बीसाइड्स) का प्रयोग/इस्तेमाल 8 अगस्त 2018 से ही बन्द कर दिया गया है। इनकी सूची इस प्रकार है:

8 अगस्त, 2018 से प्रतिबंधित कीटनाशक

1. **बेनोमाईल** (Benomyl)
2. **कार्बाराइल** (Carbaryl)
3. **डायजिनॉन** (Diazinon)
4. **फेनारिमोल** (Fenarimol)
5. **फेन्थियॉन** (Fenthion)
6. **लिन्यूरॉन** (Linuron)
7. **मैथॉक्सी इथाइल मरकरी क्लोराइड** (Methoxy Ethyl Mercury Chloride)
8. **मिथाइल पैराथियॉन** (Methyl Parathion)
9. **सोडियम सायनाइड** (Sodium Cyanide)
10. **थियोमेटॉन** (Thiometon)
11. **ट्रायडमॉर्फ** (Tridemorph)
12. **ट्राइफ्लूरालिन** (Trifluralin)

नोट : किसी भी लेख में अगर इन कीटनाशकों के प्रयोग के बारे में लिखा है तो उसे रद्द माना जाए।

कीटनाशक रसायनों का सुरक्षित प्रयोग

- **जयलाल यादव एवं नरेन्द्र सिंह**[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

क्रान्ति की सफलता से भारत खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के साथ-साथ इनका निर्यातक भी बन गया है। यह सब अर्जित करने में उन्नत किस्मों के बीजों, खादों व उर्वरकों, अभियांत्रिकी तथा कीटनाशक रसायनों का योगदान सर्वोपरि है। भारत की जनसंख्या वृद्धि को देखते हुए जल्द ही दूसरी हरित क्रांति की आवश्यकता होगी। दूसरी हरित क्रान्ति के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने में भी कीटनाशक रसायनों के प्रयोग का योगदान महत्वपूर्ण होगा।

भारत में कीटनाशकों की कुल खपत विश्व के कुल कीटनाशकों की उत्पन्नता की मात्र दो प्रतिशत है या फिर ये कहें कि हमारे देश में प्रति हैक्टेयर औसतन केवल 380 ग्राम कीटनाशक का प्रयोग होता है जबकि अनेक विकसित देशों में जैसे अमेरिका, जापान व अन्य यूरोपियन देशों में प्रति हैक्टेयर प्रयोग का स्तर 16-17 कि.ग्रा. है।

कीटों पर अपने शीघ्र व प्रभावकारी असर के कारण पिछले कुछ दशकों में अनेक प्रकार के कीटनाशक बाज़ार में आए तथा इनका अंधाधुन्ध प्रयोग हुआ। इसके परिणामस्वरूप अनेक समस्याएं जैसे पर्यावरण प्रदूषण, खाद्य पदार्थों व भूमि में कीटनाशक अवशेषों की उपस्थिति, जल प्रदूषण, कीटों में कीटनाशक रोधी क्षमता पैदा होना, मित्र जीवों को हानि आदि भी सामने आई हैं। इसके अलावा इनके ज़हरीले प्रभाव के कारण स्वास्थ्य सम्बन्धी कई विकार उत्पन्न हुए हैं तथा अनेक जानें भी गई हैं। उपर्युक्त कुप्रभावों को ध्यान में रखते हुए कीटनाशकों के सुरक्षित प्रयोग करने के उपायों की जानकारी होना बहुत ज़रूरी है।

कीटनाशकों के सुरक्षित प्रयोग से अभिप्राय यह है कि इनका प्रयोग सावधानी से हो ताकि मनुष्य, पशु-पक्षी व मित्र जीव इनके दुष्प्रभाव से बचे रहें तथा पर्यावरण को भी कम हानि हो। हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि कीटनाशक किसी भी तरह से, चाहे स्पर्श द्वारा या निगले जाने से अथवा सांस द्वारा, हमारे शरीर में प्रवेश न करें। कीटनाशक रसायनों को कीटों के खिलाफ केवल अन्तिम हथियार के रूप में ही प्रयोग करना चाहिए। कीटनाशकों के सुरक्षित प्रयोग के उपाय निम्न प्रकार से हैं :

क. कीटनाशक प्रयोग करने से पहले :

- कीटनाशक (दवाई) के डिब्बे, पैकेट या बोतल पर चिपके लेबल अथवा साथ लगे कागज़/पुस्तिका में लिखे निर्देशों को ध्यानपूर्वक पढें व सुरक्षा सम्बन्धी सावधानियों का सख्ती से पालन करें। लेबल पर कीटनाशक प्रयोग के अवधि की तारीख अवश्य जांच करें।
- विष सम्बन्धी जानकारी देने वाले संकेतों को समझें। लाल त्रिकोण अत्यन्त विषैला तथा पीला, नीला व हरा त्रिकोण क्रमशः बहुत विषैला, मध्यम विषैला व हल्का विषैला दर्शाते हैं।
- कीटनाशक प्रयोग के लिए शान्त व साफ मौसम वाला दिन चुनें। हवा की गति 5 किलोमीटर प्रति घंटा या उससे कम हो तो अच्छा होगा।
- कीटनाशकों के सीधे स्पर्श से बचें तथा इन्हें शरीर के किसी भी अंग पर न गिरने दें। सांस द्वारा भी कीटनाशक को अन्दर न जाने दें। इसके लिए रबड़ के दस्ताने, रबड़ के बूट व चश्मे पहनें तथा नाक पर गैस-मास्क लगाएं अथवा इसे मलमल के कपड़े से ढांपें। ऐसे एप्रेन अथवा कपड़े पहने जिनसे सारा शरीर ढका रहे।
- छिड़काव पम्प अथवा धूड़ा मशीन का निरीक्षण करें तथा यदि इनसे कोई रिसाव/बिखराव हो रहा हो तो उसे ठीक करें।
- छिड़काव/धूड़ा करने वाला (ऑप्रेटर) एक स्वस्थ वयस्क होना चाहिए तथा उसके शरीर पर कोई घाव/फोड़ा आदि न हो अन्यथा घाव पर जल-रोधी पट्टी लगा कर उसे सीलबंद कर दें।
- ऑप्रेटर छिड़काव पम्प/धूड़ा मशीन चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त करें।
- साफ पानी, तौलिया, साबुन आदि की व्यवस्था करें।
- कीटनाशक को उसकी मूल पैकिंग/डिब्बे में ही रहने दें, दूसरी बोतल/डिब्बे आदि में न डालें।
- कीटनाशक के डिब्बे/बोतल आदि को सावधानी से खोलें। इन्हें भूलकर भी मुंह से न खोलें तथा न ही सूंघें।
- कीटनाशक को पानी में हाथ से न मिलाएं बल्कि किसी छड़ी आदि का प्रयोग करें।
- कीटनाशकों का भण्डारण बच्चों व पालतू जानवरों की पहुंच से दूर अलग कमरे/अलमारी में करें तथा ताला लगाकर रखें।
- छिड़काव वाले खेत/स्थान के पास खाने-पीने की वस्तुएं न रखें।
- बच्चों को कीटनाशक प्रयोग की अनुमति न दें।
- खाली पेट छिड़काव न करें क्योंकि ऐसा करने से दवाई का कुप्रभाव होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

ख. कीटनाशक प्रयोग करते समय

- छिड़काव/धूड़ा करते समय छिड़कावकर्त्ता (ऑप्रेटर) अपनी पीठ उस दिशा में रखें जिधर से हवा आ रही हो ताकि दवाई शरीर पर न गिरे।
- इस दैरान कुछ भी खाना-पीना अथवा धुम्रपान करना वर्जित है।
- लगातार व देर तक छिड़काव/धूड़ा न करें तथा बीच-बीच में कीटनाशक प्रयोग किए खेत से दूर विश्राम करें। विश्राम के समय नींबू-पानी लेना लाभप्रद है।
- कीटनाशक का फसल से दूर बहाव (ड्रिफ्ट) को रोकने के लिए नोज़ल को फसल की सतह के निकट रखें, अधिक ऊपर न उठाएं।
- तेज़ धूप व गर्मी अथवा तेज़ हवा के समय कीटनाशकों का प्रयोग न करें। अगर छिड़काव करना बहुत ज़रूरी हो तो फव्वारे की बूंदों को थोड़ा मोटा करें।
- बन्द नोज़ल या पाईप को खोलने के लिए मुंह से फूंक मार कर साफ करने का प्रयास न करें।
- दवाई भरते समय इसे स्प्रे पम्प अथवा टंकी पर न छलकने दें या इसके लिए कीप का प्रयोग करें।
- छिड़काव कर्त्ता के पास अन्य व्यक्ति मौजूद रहें ताकि विष चढ़ने की स्थिति में वह उसे सम्भाल सकें।

ग. कीटनाशक प्रयोग के बाद :

- छिड़काव/धूड़ा करने के तुरन्त बाद दवाई से सने कपड़े, जूते, दस्ताने आदि उतार दें।
- कीटनाशक के खाली डिब्बों/बोतलों को न तो खेत में खुला छोड़ें तथा न ही अन्य काम में लें। इन्हें तोड़ कर चपटा कर दें तथा खाली पड़ी बंजर ज़मीन में गहरा दबा दें।
- कीटनाशक के घोल को छिड़काव पम्प में न रहने दें। पम्प व नालियों को साफ पानी से धोएं व खाली करें। नालियों को गोलाई में समेट कर भण्डार में रखें।
- हाथ, पांव, मुंह आदि साबुन लगा कर साफ करें तथा बाद में स्नान करें।

(शेष पृष्ठ 3 पर)

[1]सहायक वैज्ञानिक (पौध रोग), क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल।

रबी फसलों में दीमक से बचाव हेतु बीज उपचार

- **जयलाल यादव एवं रमेश कुमार**
बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

दीमक एक बहुभक्षी एवं सामाजिक कीट है जो भूमि के नीचे घर बना कर समूह में रहता है। प्रत्येक समूह में राजा और रानी होते हैं जो केवल प्रजनन का काम करते हैं। इनके अतिरिक्त कमेरे और सिपाही कीट होते हैं जिनके पंख नहीं होते और वे प्रजनन भी नहीं कर सकते। कमेरे कीटों के बहुत तेज़ दांत होते हैं और ये ही फसलों को हानि पहुंचाते हैं।

दीमक (सफेद चींटी) की समस्या हरियाणा के दक्षिण-पश्चिमी ज़िलों में बढ़ती जा रही है। यह कीट फसलों को उगने से लेकर कटाई तक बहुत हानि पहुंचाता है। इसका प्रकोप रेतीले व शुष्क क्षेत्रों या फिर ऐसे स्थानों पर जहां पर तापमान ऊंचा और मिट्टी की उर्वरा शक्ति कम हो, अधिक होता है। दीमक का प्रकोप बिजाई के तुरन्त बाद अक्तूबर-नवम्बर में तथा फिर पकते समय (फरवरी-मार्च) अधिक होता है।

दीमक पौधों की जड़ों और तनों के भूमिगत भाग को खाती है। जिन पौधों को दीमक लग जाती है वे पीले पड़ जाते हैं। कुछ समय पश्चात् ये मुरझाकर सूख जाते हैं। जब दीमक का आक्रमण फसल पकने के समय होता है तो गेहूं और जौ की बालियां सिर्फ घास-भूसे का गुच्छा भर रह जाती हैं। उनमें या तो दाने आते ही नहीं या फिर नाम मात्र को आते हैं। अनुमान है कि हर साल गेहूं की फसल को केवल दीमक से ही 6 से 20 प्रतिशत तक की हानि होती है।

दीमक से बचाव के लिए गेहूं, जौ तथा चने के बीज का बिजाई से पहले बीज उपचार करें। बीज उपचार बिजाई से एक दिन पहले करें। बीज उपचार के बाद बीज को पतली तह में बिछा कर छाया में सुखाएं। बीज उपचार निम्नलिखित कीटनाशकों (दवाइयों) से किया जा सकता है :

बिजाई से पहले 100 किलोग्राम बीज उपचार करने हेतु गेहूं, जौ तथा चने के लिए कीटनाशकों की मात्रा, पानी तथा कुल घोल की मात्रा तालिका में दी गई हैं:

फसल	कीटनाशक नाम	मात्रा प्रति 100 किलोग्राम (मि.ली. में)	पानी की मात्रा (लीटर में)	कुल घोल (लीटर में)
गेहूं	क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी.	150	4.85	5.0
	इथियोन 50 ई.सी.	500	4.50	5.0
जौ	क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी.	600	11.90	12.5
चना	क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी.	1500	500 मि.ली.	2.0
	मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल.	850	1.150	2.0

बीज उपचार की विधि : एक क्विंटल (100 किलोग्राम) बीज को पक्के फर्श या पॉलीथीन की बड़ी शीट पर फैला दें और आधी दवाई के घोल को बीज पर छिड़क दें और अच्छी तरह मिला दें। इसके बाद बची हुई आधी दवाई का घोल भी छिड़क कर ठीक प्रकार से मिला दें ताकि बीज के सभी भागों पर दवा की एक पतली परत सी बन जाए। उपचारित बीज को रात भर फैलाकर पड़ा रहने दें और सुबह इसे बिजाई के लिए प्रयुक्त करें। बिजाई से पहले कीटनाशक के उपचार के सिफारिश की गई फफूंदनाशक का बीमारियों व टीके का उपचार करें व फिर इसके बाद बुवाई करें।

बीज उपचार के फायदे :

- एक उत्तम टिकाऊ, सस्ता, आसान तथा अच्छा उपाय।
- मित्र कीटों एवं परजीवियों के लिए अपेक्षाकृत सुरक्षित।
- अंकुरित पौधों को पक्षियों द्वारा निकालने की हानि कम।
- वायु तथा जल में ज़हर की मात्रा भी बहुत ही कम।

नोट : *गेहूं तथा जौ की फसल में बीज उपचार से बीज फूल जाते हैं। इसलिए सीड ड्रील का डिसचार्ज रेट 10 प्रतिशत बढ़ा दें। गेहूं की खड़ी फसल में दीमक का आक्रमण होने पर 2 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को 2 लीटर पानी में मिलाकर ऐसे कुल 4 लीटर घोल को 20 किलोग्राम रेत में मिलाएं व इसके बाद एक एकड़ गेहूं की फसल में एकसार भुरकाव करके सिंचाई कर दें।*

सावधानियां :

- कीटनाशक खरीदते समय उसकी काम में लेने की अन्तिम तारीख अवश्य देखें ताकि पुरानी कीटनाशक के उपयोग से बचा जा सके।
- यदि खेत में खरीफ की फसल ली हो तो पिछली फसल के बचे हुए अवशेष, खरपतवार तथा अन्य कचरा इकट्ठा करके जला दें।
- बिजाई के बाद मशीन में बचे हुए उपचारित बीज को कृपया बाहर खुला खेत में न डालें क्योंकि इससे पक्षियों खासकर हमारे राष्ट्रीय पक्षी मोर की मृत्यु बहुत होती है। यह बहुत ही ध्यान रखने की बात है।
- यदि गोबर की खाद का प्रयोग करें तो वह ठीक प्रकार से सड़ी-गली होनी चाहिए।
- फसल को समय पर पानी अवश्य दें क्योंकि फसल में पानी की कमी होने पर भी दीमक का प्रकोप शुरू हो जाता है। [

(पृष्ठ 2 का शेष)

- छिड़काव के समय प्रयुक्त हुए वस्त्रों व अन्य सामान को साबुन लगाकर धोएं।
- छिड़काव पम्प, बाल्टी, मापक जार आदि को नालों, तालाबों आदि में न धोएं।
- बिखरी हुई दवाई को सूखी मिट्टी डाल कर सोख लें तथा उसे इकट्ठा कर पानी के स्रोतों से दूर मिट्टी में दबा दें।

घ. अन्य सुझाव :

- कीटनाशक छिड़कें/धूड़ा किए गए खेत में कम से कम दो सप्ताह तक मवेशियों को न घुसने दें।
- फसल पकने से 15 दिन पहले छिड़काव/धूडा न करें।
- छिड़काव के 6 घण्टे के भीतर अगर बारिश हो जाए तो छिड़काव दोबारा करें।
- कीटनाशकों के अवशेषों को कम करने के लिए फलों व सब्जियों को नल के बहते पानी में भली प्रकार से धोएं।
- लापरवाही से अथवा दुर्घटनावश ज़हर चढ़ने पर रोगी का डॉक्टर से तुरन्त उपचार करवाएं।
- परन्तु इससे पूर्व रोगी की प्राथमिक चिकित्सा शुरू कर दें। रोगी को तुरन्त दुर्घटना स्थल से हटाएं तथा दवाई से सने कपड़े, जूते आदि उतार दें।
- रोगी अगर होश में हो तो शीघ्रता से 2-3 गिलास साफ पानी पिलाएं व उल्टी करवाएं।
- शरीर के प्रदूषित भागों को साबुन लगाकर धोएं। आंख में दवाई गिरने पर आंख को 10-15 मिनट तक बार-बार साफ पानी से धोएं।
- तेज़ बुखार या पसीना आने पर ठण्डे पानी से शरीर पोंछें तथा कंपकंपी आने पर कंबल से ढकें। आवश्यकता पड़ने पर कृत्रिम श्वास भी दें। [

मेथी की उन्नत उत्पादन तकनीक

- **ईशा, सतबीर सिंह पूनिया एवं टोडरमल**
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मेथी रबी फसलों में उगाई जाने वाली एक मुख्य फसल है। यह फसल मुख्यत: राजस्थान, तमिलनाडू, गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब एवं उत्तरप्रदेश में लगाई जाती है। परन्तु कुछ वर्षों से हरियाणा में भी इस फसल के अधीन क्षेत्रफल बढ़ता जा रहा है। इन सभी राज्यों में से अधिकतम उत्पादन राजस्थान का है।

इसे व्यावसायिक तौर पर बीज के माध्यम से उगाया जाता है। मेथी का उपयोग मसालों के रूप में और विभिन्न खाद्य पदार्थों में भी किया जाता है। इसकी फली और पत्तियों का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। नित्यक्रम में मेथी का सेवन हमें कई प्रकार की बीमारियों से न केवल बचाता है अपितु हमारे शरीर की रोग से लड़ने की क्षमता को भी बढ़ाता है। मेथी का उपयोग स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक लाभकारी है जैसे ये चर्बी को घटाता है, पाचन क्रिया को भी बढ़ाता है। क्षेत्रों के अनुसार मेथी को कई नाम दिये गऐ हैं। जैसे हिंदी में मेथी, मराठी में मेथ्या, कन्नड़ में मेनथ्या, इत्यादि।

जलवायु: सामान्य मेथी का वानस्पतिक नाम *ट्राइगोनेलाफोनीम* - ग्रींक है। यह रबी की फसल है तथा इसकी खेती रबी के मौसम यानि अक्तूबर-नवंबर में की जाती है। मेथी के लिए लंबे ठंडे मौसम और कम तापमान उपयुक्त रहता है। वातावरण में अधिक नमी या बादलों की छाया सफेद चूर्णी रोग तथा चेपा के प्रकोप को निमंत्रण देता है।

भूमि एवं भूमि की तैयारी: मेथी की खेती सभी तरह की मिट्टी में की जा सकती है, लेकिन दोमट या बलुई दोमट मृदा में मेथी की खेती से अत्यधिक उत्पादन होता है। इस मृदा में कार्बनिक पदार्थ प्रचुर मात्रा में होता है। इसमें पर्याप्त मात्रा में जल निकास की क्षमता होनी चाहिए।

उन्नतशील किस्में : हरियाणा के क्षेत्रों के लिए एच एम 65 एक उन्नत किस्म है। लाभ सेलेक्शन-1, गुजरात मेथी-2, आर एम टी 1, राजेन्द्र क्रांति, हिसार सोनाली, कोयम्बटूर-1 कुछ अन्य उन्नत किस्में हैं।

बीज मात्रा : सामान्य मेथी की खेती हेतु बीज मात्रा आठ किलोग्राम प्रति एकड़, मध्यम किस्म की भूमि के लिए तथा 6 किलोग्राम प्रति एकड़ हल्की भूमि के लिए पर्याप्त है।

बिजाई का समय : मध्य अक्तूबर से मध्य नवंबर मेथी की बुवाई के लिए उपयुक्त समय है। 20 नवम्बर से 10 दिसम्बर तक हिसार क्षेत्र के लिए बिजाई का उपयुक्त समय है। पहाड़ी क्षेत्र में इसे मार्च-अप्रैल तक बोया जा सकता है।

अधिक उत्पादन के लिए इसकी बुवाई पंक्तियों में 30 सैं.मी. कतार से कतार दूरी पर एवं 10 सैं.मी. पौधे से पौधे की दूरी पर पोरा विधि से करें।

सिंचाई : मेथी के अंकुरित होने के लिए मृदा में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। पहली सिंचाई 4 से 6 पत्तियां आने पर ही करनी चाहिए। मुख्यत: सर्दी में 2 सिंचाइयों का अतंर 15 से 25 दिन तथा गर्मी के दिनों में 10 से 15 दिन रखना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : रासायनिक खाद के रूप में 8 किलोग्राम नाइट्रोजन (17.5 किलोग्राम यूरिया), 16 किलोग्राम फॉस्फोरस (100 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ बिजाई के समय ड्रिल करें। गोबर खाद या कम्पोस्ट को खेत की तैयारी से पहले डालना चाहिए। चूंकि यह दलहनी फसल है इसलिए फसल को कम नाइट्रोजन देने की आवश्यकता है।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पॉलीहाऊस में खीरा की व्यावसायिक खेती

- **राजेश कुमार, विकास कुमार शर्मा एवं गगन मेहता**
उद्यान विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

साधारणत: खीरा उष्ण मौसम की फसल है। इनकी वृद्धि की अवस्था के समय पाला पड़ने में इसकी अत्यधिक हानि होती है। फलों की उचित वृद्धि व विकास के लिए 15-20 डिग्री सैं.ग्रे. का तापमान उचित होता है। खरबूजा व तरबूज की अपेक्षा खीरे को कम तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है।

किस्मों का चुनाव : ग्रीनहाऊस में ऐसी किस्मों का चुनाव किया जाता है जो कि गाइनोसियस हो (बीज रहित) तथा फल कोमल एवं मुलायम एवं उपज अच्छी हो। इस प्रकार की किस्मों में बगैर परागण के सीधा फल का विकास होता है। खीरा अपरागित प्रकार का होता है और सभी फूल मादा ही होते हैं जिन्हें यूरोपीय किस्में भी कहा जाता है। इसमें बगैर परागण या फर्टीलाईज़ेशन के फलों का स्थापन व विकास होता है। इसके फल मुलायम, बीज रहित एवं बिना कड़वाहट के होते हैं। इन्हें छीलने की भी आवश्यकता नहीं होती।

पौध तैयार करना : किस्मों के चुनाव के बाद उनकी स्वस्थ पौध भी संरक्षित क्षेत्रों जैसे पॉलीहाऊस या नर्सरी ग्रीनहाऊस में ही प्लास्टिक के खानेदार ट्रे में मीड़िया (कोकोपीट, वर्मीकुलाईट व परलाइट) को 3:1:1 अनुपात के आधार पर बनाया जाता है। आमतौर पर खीरे की पौध 20-25 दिनों में रोपाई योग्य हो जाती है। सर्दी में बीजों को ट्रे में बोने के बाद अंकुरण हेतु 20 से 25 डिग्री सैं.ग्रे. तापक्रम पर रखा जाता है। अंकुरण के तुरन्त बाद उनको नर्सरी ग्रीनहाऊस या पॉलीहाऊस में लगा दिया जाना चाहिए।

भूमि व उसकी तैयारी : रोपाई से एक माह पहले खेत की गहरी जुताई करके भूमि को अच्छी प्रकार तैयार करना चाहिए तथा भूमि से विभिन्न प्रकार के रोगाणुओं व कीटाणुओं के निदान के लिए मिट्टी को फार्मल्डीहाइड के घोल से उपचारित करना चाहिए। इसमें 1.5 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद, 5 ग्रा. नाईट्रोजन 2.5 फॉस्फोरस व 2.5 ग्रा. पोटाश की शुद्ध मात्रा प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से डालनी चाहिए तथा मिट्टी में अच्छी प्रकार से मिला देना चाहिए।

कृषि क्रियाएं एवं खरपतवार नियंत्रण : पौध तैयार होने के बाद पॉलीहाऊस में पौध की रोपाई से पूर्व ग्रीनहाऊस में उठी हुई क्यारियां बनाई जाती हैं। जिनकी चौड़ाई 80-90 सैं.मी. हो सकती है तथा दो क्यारियों के बीच लगभग 40-45 सैं.मी. का स्थान खाली छोड़ा जाता है। क्यारियां बनाने के बाद प्रत्येक क्यारी पर दो ड्रिप पाइपों को 40-50 सैं.मी. की चौड़ाई पर डाला जाता है। आवश्यकता अनुसार पौधों की निराई-गुड़ाई करनी चाहिए।

रोपाई व उसका समय : खीरा विभिन्न मौसम के लिए उपलब्ध किस्मों के अनुसार पूरे वर्ष उगाया जा सकता है। दो उठी क्यारियों के बीच से दूरी 1.5 से 1.6 मीटर होना चाहिए तथा इसको एक ही कतार पर 30 से 40 सैं.मी. की दूरी पर रोपते हैं। जिसमें 1000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल में 2200-2300 तक पौधे लगाये जा सकते हैं।

रोपाई का समय : पॉलीहाऊस में तीन फसलें उगाई जाती हैं: पहली - अगस्त में, दूसरी - अक्तूबर और तीसरी-फरवरी में।

फसल को सहारा देना : रोपाई के 25-30 दिन बाद रस्सियों के द्वारा सहारा देकर लपेटने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। ये रस्सियां क्यारियों के

(शेष पृष्ठ8 पर)

चना उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं

- **रमेश कुमार, अशोक ढिल्लों एवं जयलाल यादव**
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत का विश्व में दलहन उत्पादन में यद्यपि विशेष स्थान है तो भी अपनी शाकाहारी जनसंख्या की दालों की मांग पूरी नहीं कर पाता। दालों की बढ़ती मांग व आयात खर्च को देखते हुए दलहनी फसलों की खेती का महत्व तथा उत्पादकता बढ़ाने की आवश्यकता है। भारत में दलहनी फसलों की खेती 236.3 लाख हैक्टेयर में होती है तथा कुल पैदावार 147.6 लाख टन है। चना, मसर, मटर रबी मौसम की तथा अरहर, उड़द, मूंग खरीफ मौसम की प्रमुख दलहनी फसल हैं। हरियाणा प्रदेश में इन फसलों की खेती 1.79 लाख हैक्टेयर में होती है। चना रबी मौसम की प्रमुख दलहनी फसल है। चना की खेती अधिकतर दक्षिण पश्चिम ज़िलों में होती है। हरियाणा राज्य में चना की औसत पैदावार 10.0 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है जो सिफारिश की गई उन्नत किस्मों की औसत पैदावार 20-25 क्विंटल प्रति हैक्टेयर से काफी कम है। फसल की उत्पादकता बढ़ाने के लिये किसानों द्वारा फसल उत्पादन की उन्नत कृषि क्रियाएं अपनाने की आवश्यकता है जिनका संक्षेप में विवरण निम्नलिखित है:

उन्नत किस्में

सी 235 : इस किस्म की बिजाई की सिफारिश प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों के लिये की गई है। यह किस्म अंगमारी (ब्लाईट) रोग की सहनशील है परन्तु उखेड़ा रोगग्राही है। इसकी औसत पैदावार 8 क्विंटल प्रति एकड़ है।

हरियाणा चना नं. 1 : यह किस्म बारानी तथा सिंचित दोनों परिस्थितियों में बिजाई के लिये उपयुक्त है। यह किस्म अन्य किस्मों की अपेक्षा जल्दी पकती है। यह किस्म उखेड़ा रोग के प्रति सहनशील है तथा इसमें फली छेदक कीड़े का आक्रमण अपेक्षाकृत कम होता है। इसकी औसत पैदावार 8-10 क्विंटल प्रति एकड़ है।

हरियाणा चना नं. 3 : इस किस्म की सिफारिश सिंचित क्षेत्रों में बिजाई के लिये की गई है। यह किस्म सीधी बढ़ने वाली तथा फैलाव कम होता है। इस किस्म का दाना मोटा होता है। यह किस्म उखेड़ा, जड़गलन, अंगमारी व चना की अन्य प्रमुख बीमारियों की अवरोधी है। इसकी औसत पैदावार 8-10 क्विंटल प्रति एकड़ है।

हरियाणा चना नं. 5 : हरियाणा प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों में बिजाई के लिये इस किस्म की सिफारिश की गई है। इस किस्म के पौधे सीधे, लम्बे और कम फैलावदार होते हैं। यह किस्म उखेड़ा व जड़गलन रोग की रोगरोधी किस्म है। इसकी औसत पैदावार 8.5 से 10.0 क्विंटल प्रति एकड़ है।

बिजाई का समय : अच्छी पैदावार के लिये चना फसल की मध्य अक्तूबर से 30 अक्तूबर तक बिजाई करें। अगेती बिजाई की हुई फसल में तापमान अधिक होने के कारण उखेड़ा रोग लगने का भय रहता है तथा वानस्पतिक वृद्धि अधिक होती है जिससे बीज कम बनते हैं और पैदावार कम होती है।

बीज की मात्रा : एक एकड़ में फसल की बिजाई के लिये 15-18 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। मोटा दाना की किस्मों (हरियाणा चना न. 3) की बिजाई के लिये 30-32 कि.ग्रा. बीज की प्रति एकड़ आवश्यकता होती है।

जीवाणु खादों का प्रयोग : चना की अच्छी पैदावार के लिये बिजाई से पहले बीज का राइजोबियम तथा पी.एस.बी. के टीके से उपचार करें। टीके लगाने के लिये 50 ग्राम गुड़ को 2 कप पानी में घोल लें। इस घोल को एक एकड़ के बीज में मिला दें। गुड़ लगे बीज पर टीकों को डालकर हाथ से मिलाएं ताकि द्रव्य बीजों पर अच्छी तरह लग जाये। इसके बाद उपचारित बीज को छाया में सुखाकर बिजाई करें।

बिजाई की विधि : सिंचित परिस्थितियों में चना की बिजाई खुडों में 30 सैं.मी. तथा बारानी परिस्थितियों में जहां नमी कम हो 45 सैं.मी. की दूरी पर करें। जहां बाजरा के बाद चना की फसल ली जाती है वहां नमी आमतौर पर हल्की से मध्यम दर्जे की होती है, ऐसी स्थिति में चना की बिजाई चौड़ी पंक्तियों (45 सैं.मी.) की दूरी पर करें। चना की बिजाई दोहरी पंक्ति (30/60 सैं.मी.) में की जा सकती है। दो पंक्तियों के बीच की दूरी 30 सैं.मी. तथा दोहरी पंक्तियों में आपसी दूरी 60 सैं.मी. रखें।

खाद एवं उर्वरक : चना की अच्छी पैदावार के लिये 6 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (12-13 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 16 कि.ग्रा. फास्फोरस (100 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट या 35 कि.ग्रा. डी.ए.पी.) प्रति एकड़ बिजाई के समय ड्रिल करें। सिंचित फसल में उपर्युक्त पोषक तत्वों के साथ 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ प्रयोग करें।

सिंचाई : वैसे तो चना की बिजाई बारानी क्षेत्रों में ही प्राय: की जाती है परन्तु सिंचाई करने से पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है। अत: जहां हो सके, फूल आने से पहले बिजाई के 45 से 60 दिन के बीच एक सिंचाई करें। दूसरी सिंचाई वर्षा न होने की अवस्था में टाट विकसित होने की अवस्था पर करें ताकि दाने कमज़ोर न रहें। ध्यान रहे कि सिंचाई में प्रयुक्त पानी खारा न हो।

निराई-गुड़ाई : चना की अच्छी पैदावार लेने के लिये दो निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है। पहली गुड़ाई बिजाई से 25-30 दिन तथा दूसरी 45-50 दिन पर करें।

कीड़ों की रोकथाम : दीमक, कटुआ सूण्डी तथा फली छेदक सूण्डी चना फसल के प्रमुख कीड़े हैं। दीमक फसल की बिजाई से कटाई तक हानि पहुंचाती है। दीमक का प्रकोप हल्की रेतीली भूमि तथा अर्ध नमी की अवस्था में अधिक होता है। कटुआ सूण्डी उगते हुए पौधे को तने के बीच अथवा बढ़ते हुए पौधों की शाखाओं को काटकर नुकसान पहुंचाती है। फली छेदक सूण्डी पत्तियों, कलियों व फलियों (टाट) पर आक्रमण करती है। यह फलियों में बन रहे दानों को खाकर नष्ट कर देती है। दीमक की रोकथाम के लिये बीज का क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. (15 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें।

कटुआ सूण्डी की रोकथाम के लिये 80 मि.ली. फेनवालरेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. साइपरमैथरिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामैथरिन 2.8 ई.सी. को 100 लीटर पाने में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

फली छेदक सूण्डी की रोकथाम के लिये 400 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. या 400 ग्राम कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. या 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस. एल. या 80 मि.ली. फैनवालरेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. साइपरमैथरिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामैथरिन 2.8 ई.सी. या 150 मि.ली. नोवालूरान (रीमोन 10 ई.सी.) को 150 लीटर पाने में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव उस समय शुरू करें जब एक सूण्डी प्रति मीटर लाईन पौधों पर मिलने लगे तथा पौधों पर 50 प्रतिशत टाट पड़ गये हों। यदि ज़रूरी हो तो दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करें। बड़ी सूण्डियों को हाथ से इकट्ठा करके नष्ट करें।

बीमारियों की रोकथाम : उखेड़ा, तना गलन, जड़ गलन तथा अंगमारी चना फसल की प्रमुख बीमारियां हैं जो फसल की पैदावार को प्रभावित करती हैं। इन बीमारियों की रोकथाम के लिये निम्नलिखित उपाय अपनाएं :

- रोगरोधी किस्मों की बिजाई करें।
- स्वस्थ बीज का प्रयोग करें तथा बीज का बाविस्टिन (2.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें।
- रोगग्रस्त पौधों को जलाकर नष्ट करा दें।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड

- **चरण सिंह, राम प्रकाश एवं सीमा**
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना भारत सरकार द्वारा 19 फरवरी की फसल-वार की सिफारिश की गई है जिसमें पोषक तत्वों और उर्वरकों की फसलवार सिफारिशें हैं। जो कि व्यक्तिगत फार्मों के लिए आवश्यक हैं ताकि किसानों को इनपुट के विवेकपूर्ण उपयोग के माध्यम से उत्पादकता में सुधार करने में मदद मिल सके। सभी मिट्टी के नमूनों का परीक्षण देश भर के विभिन्न मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं में किया जाना है।मृदा स्वास्थ्य कार्ड एक मुद्रित रिपोर्ट है जिसे एक किसान को उसकी प्रत्येक खेत के लिए सौंप दिया जाएगा। इसमें 12 मापदंडों अर्थात् एन, पी, के (मैक्रो-पोषक तत्व), सल्फर (माध्यमिक- पोषक तत्व) ज़िंक, बोरोन, लौह, मैंगनीज़, कॉपर (सूक्ष्म पोषक तत्व) और पीएच (मिट्टी की प्रतिक्रियाएं मिट्टी की अम्लता/क्षारीयता), कुल घुलित लवण, ऑर्गेनिक कार्बन (भौतिक पैरामीटर) के संबंध में उसकी मिट्टी की स्थिति होगी। इसके आधार पर, उर्वरक सिफारिशों और खेत के लिए आवश्यक मिट्टी संशोधन का भी संकेत देगा। कार्ड किसान के खेत की मिट्टी की पोषक स्थिति के आधार पर एक सलाहकार होगा। यह आवश्यक विभिन्न पोषक तत्वों की खुराक पर सिफारिशें दिखाएगा। इसके अलावा, यह किसान को उर्वरकों और उनकी मात्रा को लागू करने की सलाह देगा, ताकि उत्तम पैदावार का एहसास हो सके।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना भारत के प्रधान मंत्री द्वारा किसानों के कल्याण के लिए शुरू की गई थी। यह योजना किसानों को उन फसलों के बारे में जानने में मदद करती हैं जो वैज्ञानिक तरीकों पर आधारित मिट्टी के आधार पर लगाई जा सकती हैं। ऐसा करने से किसान फसलों की कटाई करते समय अधिकतम उपज प्राप्त कर सकते हैं। योजना के तहत, विश्लेषण के आधार पर, किसानों को एक मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्रदान किया जाता है जो फसलों को निर्धारित करता है जिसे विशेष मिट्टी में उगाया जा सकता है और फसलों की उत्पादकता को विकसित करने के उपाय किए जाते हैं। इस लेख में, हम मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना के विभिन्न पहलुओं को विस्तार से देखते हैं। मृदा स्वास्थ्य कार्ड मिट्टी की उर्वरता की स्थिति और फसल उत्पादकता को प्रभावित करने वाले अन्य महत्वपूर्ण मिट्टी मापदंडों की क्षेत्र-विशिष्ट विस्तृत रिपोर्ट है।

सॉइल हेल्थ कार्ड में विवरण शामिल हैं : मृदा उर्वरता के बारे में जानकारी, फसलों में उर्वरक प्रयोग की खुराक, खारा या क्षारीय मिट्टी के मिट्टी संशोधन पर जानकारी तथा एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन।

मापदंड : मिट्टी के नमूनों को सिंचित क्षेत्र में 2.5 हैक्टेयर के ग्रिड में और 10 हैक्टेयर में बारिश वाले क्षेत्रों में जीपीएस उपकरण और राजस्व मानचित्रों की मदद से तैयार किया जाएगा।

मिट्टी का नमूना: रबी और खरीफ की फसल की कटाई के बाद या जब खेत में कोई खड़ी फसल न हो, तो साल में दो बार मिट्टी के नमूने लिए जाते हैं। मृदा नमूने को एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा 15-20 सेमी की गहराई से मिट्टी को 'वी' आकार में काटकर एकत्र किया जाएगा। इसे चार कोनों और क्षेत्र के केंद्र से एकत्र किया जाएगा और अच्छी तरह से मिश्रित किया जाएगा और इसका एक हिस्सा नमूने के रूप में उठाया जाएगा। छाया वाले क्षेत्रों से बचा जाएगा। चुने गये नमूने को कोडित किया जाएगा। फिर इसे विश्लेषण के लिए मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में स्थानांतरित किया जाएगा। मिट्टी के नमूने का परीक्षण सभी स्वीकृत 12 मापदंडों के लिए निम्नलिखित मानकों के अनुसार अनुमोदित मानकों के अनुसार किया जाएगा :

* कृषि विभाग और उनके स्वयं के कर्मचारियों के स्वामित्व वाली राज्य स्तर की प्रयोगशाला में।
* कृषि विभाग के स्वामित्व वाले राज्य स्तर पर मज़दूरों पर, लेकिन आउटसोर्स एजेंसी के कर्मचारियों द्वारा।
* आउटसोर्स एजेंसी और उनके कर्मचारियों द्वारा स्वामित्व वाली राज्य स्तर की प्रयोगशाला में।
* के.वी.के. और एस ए यू सहित आई सी ए आर संस्थानों में।
* प्रोफेसर/वैज्ञानिक की देखरेख में छात्रों द्वारा विज्ञान महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों की प्रयोगशालाओं में।

रुपये की राशि : 190 रुपये प्रति मिट्टी नमूना राज्य सरकारों द्वारा प्रदान किया जाता है। इसमें किसान को मृदा नमूने के संग्रह, उसके परीक्षण, उत्पादन और मृदा स्वास्थ्य कार्ड के वितरण की लागत शामिल है।

परीक्षण किए गए 12 पैरामीटर हैं :

भौतिक पोषक तत्व : पीएच (मिट्टी की प्रतिक्रियाएं मिट्टी की अम्लता वक्षारीयता), कुल घुलित लवण, ऑर्गेनिक कार्बन

प्रमुख पोषक तत्व : नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश

मध्यम पोषक तत्व : सल्फर

सूक्ष्म पोषक तत्वों : ज़िंक, बोरोन, लौह, मैंगनीज़, कॉपर

समझने में आसानी के लिए परीक्षा परिणाम रंग कोड के साथ दिखाए जाते हैं: हरा=पर्याप्त; पीला=मध्यम; बैंगनी=अम्लीय/सोडिक; लाल=कमी; सोडिक (सोडियम या नमक की लवणता को दर्शाता है)

मृदा स्वास्थ्य कार्ड पोर्टल : किसानों को मृदा नमूनों और परीक्षण प्रयोगशाला रिपोर्टों के विवरण के साथ वेब पोर्टल पद पर पंजीकरण करना होगा।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड मोबाइल एप्लिकेशन : विश्व मृदा दिवस के अवसर पर, केंद्रीय कृषि और किसान कल्याण मंत्री राधा मोहन सिंह ने देश में 120 मिलियन खेत जोत के लिए मृदा स्वास्थ्य के बारे में जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य से मोबाइल ऐप लॉन्च किया।

एप्लिकेशन को फील्ड-स्तरीय श्रमिकों को लाभ होगा क्योंकि यह फील्ड में नमूना संग्रह के समय नमूना विवरण दर्ज करते समय स्वचालित रूप से जीआईएस निर्देशांक से उस स्थान को इंगित करेगा जहां से नमूना एकत्र किया गया है।

यह ऐप राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के लिए विकसित अन्य जियोटैगिंग ऐप की तरह काम करता है। ऐप में किसानों के विवरण शामिल हैं जिनमें नाम, आधार कार्ड नंबर, मोबाइल नंबर, लिंग, पता आदि शामिल हैं। मृदा स्वास्थ्य कार्ड किसानों को मिट्टी के स्वास्थ्य और उर्वरता में सुधार के लिए पोषक तत्वों की उचित खुराक की सिफारिश के साथ मिट्टी की पोषक तत्वों की स्थिति के बारे में सूचित करता है।

एक खेत को हर दो साल में एक बार मृदा कार्ड मिलेगा ताकि पोषक तत्वों की कमी का नियमित रूप से पता लगाया जा सके और उसमें सुधार किया जा सके। उर्वरकों के असंतुलित उपयोग से खेतों को नुकसान होता है और उत्पादन में कमी आती है।

नमूनों के ऑनलाइन पंजीकरण और परीक्षा परिणाम मृदा स्वास्थ्य कार्ड के राष्ट्रीय पोर्टल पर अपलोड किए गए हैं। परीक्षण के परिणामों के आधार पर, सिस्टम स्वचालित रूप से सिफारिशों की गणना करता है।

उद्देश्य : किसानों की मिट्टी की गुणवत्ता और लाभप्रदता में सुधार करना, ग्रामीण युवाओं के लिए रोज़गार सृजन

मृदा विश्लेषण के बारे में जानकारी अध्ययन करने के लिए, किसानों को उनके घर पर मृदा परीक्षण की सुविधा उपलब्ध कराना।

लाभ : मृदा स्वास्थ्य कार्ड से किसानों को मिट्टी की सेहत सुधारने और अंतत: उत्पादकता बढ़ाने में, मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्राप्त करने के बाद किसानों ने एन, पी और के उपयोग को कम कर दिया है और सूक्ष्म पोषक तत्वों के उपयोग में वृद्धि की है जिससे उन्हें फसलों की प्रजनन क्षमता बढ़ाने में मदद करता है। किसानों को धान और कपास जैसी अधिक इनपुट-गहन फसलों से कम इनपुट-गहन फसलों की ओर विविधता लाने में मदद करता है, किसानों को इनपुट प्रतिस्थापन खोजने में भी मदद मिली है, सरकारों से सब्सिडी वाले सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसी विशिष्ट योजनाओं के निर्माण में मदद की है।

कमियां: कई किसान सामग्री को समझने में असमर्थ हैं, इसलिए अनुशंसित प्रथाओं का पालन करने में असमर्थ हैं।

प्रति इकाई क्षेत्र में मिट्टी के नमूनों की संख्या मिट्टी की परिवर्तनशीलता पर आधारित नहीं है। कृषि विस्तार अधिकारियों और किसानों के बीच समन्वय का अभाव। माइक्रोबियल गतिविधि, नमी प्रतिधारण गतिविधि आवश्यक है लेकिन मृदा स्वास्थ्य कार्ड में गायब है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड रासायनिक पोषक संकेतकों पर अधिक केंद्रित है। भौतिक और जैविक गुणों के बीच केवल मिट्टी का रंग शामिल है। अपर्याप्त मृदा परीक्षण अवसंरचना। कुछ महत्वपूर्ण संकेतक (i) फसल का इतिहास, (ii) जल संसाधन (मिट्टी की नमी), (iii) मिट्टी की ढलान, (iv) मिट्टी की गहराई, (v) मिट्टी का रंग, (vi) मिट्टी की बनावट (थोक घनत्व) और (vii) सूक्ष्म जैविक गतिविधि आदि शामिल नहीं हैं। [

(पृष्ठ 4 का शेष)

खरपतवार नियंत्रण: मेथी में हरियाणा के क्षेत्रों में मुख्यत: निम्नलिखित खरपतवारों का प्रकोप रहता है : मैना, जंगलीजई, जंगलीपालक, मटरी, मंडूसी, हिरणखुरी, सैंजी, गजरीला

खेत को खरपतवार से मुक्त रखकर मेथी की अच्छी फसल लेने के लिए कम से कम दो निराई-गुड़ाई, पहली बुवाई के 30 से 35 दिन तथा दूसरी 60 से 65 दिन पश्चात अवश्य करनी चाहिए। इससे मिट्टी में हवा का संचार अच्छे से होता है।

रोग एवं रोकथाम : सफेद रंग के फफूंद धब्बों के लिए 0.2 प्रतिशत सल्फैक्स या 0.1 प्रतिशत कैराथेन दवा का छिड़काव 10 से 15 दिन के अन्तर पर करें।

कटाई : इसकी कटाई किस्मों एवं उसके उपयोग में लाए जाने वाले भाग पर निर्भर करती है। सब्जी के लिए पहली कटाई जब मेथी हरी अवस्था में हो तब की जाती है। बुवाई के लगभग 4 सप्ताह उपरान्त पौधे को भूमि सतह के पास से काटते हैं। लगभग 4-5 कटाई ली जाती है।

बीज के लिए उगाई गई फसल लगभग 120 से 160 दिन में पक जाती है। इसकी कटाई या तो जब फलियाँ पीली पड जाएं या नीचे पत्ती गिरने पर शुरु करनी चाहिए। देरी से फसल काटने पर बीज झड़ जाते हैं। कटाई के बाद उसके बण्डल बनाकर 4 से 6 दिनों तक सुखाएं ताकि नमी न हो एवं बीजों की गुणवत्ता को भी हानि न पहुंचे। [

लेखकों से अनुरोध

हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। लेख में अंग्रज़ी शब्दों का प्रयोग न करें। टाईपिंग के लिए **कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें**। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं : **haryanakhetihau@gmail.com**

नींबू वर्गीय पौधों के रोग व निदान

- राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण
उद्यान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में नींबू वर्गीय फलों का क्षेत्रफल काफी बढ़ा है। जो प्रदेश की अर्थव्यवस्था के लिए फायदेमंद है। माल्टा, संतरा, नींबू, मिट्ठा नींबू व ग्रेपफ्रूट नींबूवर्गीय श्रेणी में आते हैं। इन फलों में विटामिन 'सी' की मात्रा अधिक होती है। इसके अतिरिक्त इन फलों में विटामिन 'ए', 'बी' एवं खनिज तत्व भी पाए जाते हैं। इन फलों पर विभिन्न बीमारियों का प्रकोप होता है। जिसकी वजह से फल की पैदावार व गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन बीमारियों की पहचान व निवारण बताया जा रहा है :

संतरा एवं माल्टा का कोढ़ : पत्तों, टहनियों और फलों पर गहरे भूरे रंग के खुरदरे धब्बे पड़ जाते हैं जो धब्बों के चारों ओर पीले वृत्ताकार दिखाई देते हैं।

टहनीमार रोग : टहनियां ऊपरी सिरे से सूखनी शुरू हो जाती हैं कभी-कभी बड़ी-बड़ी टहनियां भी सूख जाती हैं और फल व तने भी गल सकते हैं।

गूंद निकलने का रोग (पौध गलन) : ज़मीन के बराबर सतह के नज़दीक तने की छाल उखड़कर गल जाती है जिससे अन्दर की लकड़ी मर जाती है और उसमें से गूंद सा निकलने लगता है।

तने व फल का गलना : पहले पत्तों, टहनियों और फलों पर बाहर से पीले गहरे रंग के गोल धब्बे पड़ जाते हैं। बाद में ये धब्बे ऊपर को उभरकर खुरदरे और गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। धब्बों के बाहर वाला पीला रंग खत्म हो जाता है। और पतों व फल की सतह कागज़ की तरह हो जाती है।

जस्ते की कमी : पत्ते की नसों के बीच की जगह सफेद सी हो जाती है। ऊपर के पत्ते छोटे रह जाते हैं।

सभी बीमारियों का नियन्त्रण कार्यक्रम:

दिसम्बर-फरवरी : गोंद निकलने वाले भागों को कुरेद कर साफ करें। बोर्डो पेस्ट लगाएं, फिर एक सप्ताह बाद दोबारा बोर्डो पेस्ट लगायें। काट-छांट के बाद 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम एक लीटर पानी) को 500 लीटर पानी में बने घोल से तीन छिड़काव करें - पहला छिड़काव अक्तूबर, दूसरा दिसम्बर में एवं तीसरा फरवरी में करें अथवा 500 मि.ग्रा. प्लान्टामासिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को प्रति लीटर पानी की दर से जुलाई, अक्तूबर-दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

अप्रैल-मई : कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें। उसके बाद जस्ते की कमी को रोकने के लिये 3 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट 1.5 कि.ग्रा. ज़िंक 1.5 कि.ग्रा. बुझा हुआ चूना 500 लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

जुलाई : बरसात की पहली बौछार के तुरन्त बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।

अगस्त-सितम्बर : संतरे व माल्टे के कोढ़ की रोकथाम के लिए जिन दिनों बारिश न हो उन दिनों में 0.3 प्रतिशत कॉपर-ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। सितम्बर माह में व अप्रैल मई में छिड़के गये ज़िंक सल्फेट व चूने के मिश्रण का छिड़काव भी दोहरायें। केवल स्वस्थ प्रमाणित तनों की कटिंग लगाएं।

अक्तूबर-नबम्बर : फरवरी के महीने में बताया गया कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। [

पैदावार बढ़ाने हेतु : उर्वरकों का सही उपयोग

- **राकेश कुमार, विकास एवं मनोज कुमार शर्मा**
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज हमारे देश की जनसंख्या लगातार बढ़ रही है जिसके कारण खाद्यान्नों की मांग भी बढ़ रही है। इस मांग को पूरा करने के लिए अधिक खाद्यान्न उत्पादन आवश्यक है। अधिक फसल उत्पादन के लिये आधुनिक कृषि तकनीक में उन्नत बीज, समय से फसल बुवाई, कोड़ाई, उर्वरक का उपयोग, खरपतवार नियंत्रण, कीट व रोग नियंत्रण, समय से कटाई एवं फसल चक्र का उपयोग करने लगे हैं। इनमें सबसे महंगा उपादान उर्वरक है। कृषि उत्पादन बढ़ाने में उर्वरकों का महत्व विशेष है। फसलों में पैदावार बढ़ाने के लिए आवश्यक पोषक तत्वों का उचित मात्रा में देना आवश्यक है। इससे भूमि की उपजाऊ शक्ति भी बनी रहती है। उर्वरकों की कीमतें अधिक होती हैं तथा इनकी उपलब्धता भी सीमित है। इसलिए उर्वरकों का सही उपयोग कम लागत व अधिक पैदावार के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्राय: पौधे, प्रयोग किये गये नत्रजन का 40 से 50 प्रतिशत, फास्फोरस का 10 से 20 प्रतिशत, पोटाश का 50 प्रतिशत तथा सूक्ष्म तत्व युक्त उर्वरकों का 2 से 5 प्रतिशत ही उपयोग कर पाते हैं। इसलिए कृषि में अधिक लाभ लेने के लिए उर्वरकों का सही उपयोग अति आवश्यक है।

उर्वरकों के सही उपयोग के लिए ध्यान रखने योग्य कुछ बातें :

- उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण व चुनाव मिट्टी की उपजाऊ शक्ति, फसल एवं उसकी किस्म की आवश्यकता अनुसार करें। सबसे पहले खेत की मिट्टी की जांच करवाएं, इससे पोषक तत्वों की भूमि में मात्रा का पता चलता है। मिट्टी परीक्षण से आपको मिट्टी में सुधार की आवश्यकता है या नहीं यह भी पता चलता है। यदि आपकी मिट्टी अम्लीय है तो उसमें चूना डालकर भूमि सुधार कर सकते हैं। क्षारीय भूमि सुधारने के लिए रासायनिक भूमि सुधारक पदार्थों जैसे जिप्सम, पाइराइट, फॉस्फोजिप्सम एवं गंधक का अम्ल आदि का प्रयोग किया जाता है। भूमि सुधार करके उर्वरक की क्षमता का पूर्ण उपयोग कर सकते हैं।
- रासायनिक उर्वरकों की प्रयोग क्षमता में बढ़ोत्तरी के लिए साथ में देसी खादों जैसी हरी खाद, गोबर की खाद तथा कम्पोस्ट आदि का प्रयोग करें। देसी खादें भूमि की जल व पोषक तत्व धारण करने की क्षमता को बढ़ाती हैं। इनके सही उपयोग से मिट्टी में गंधक व सूक्ष्म तत्वों की आपूर्ति खुद ही होती रहती है।
- रेतीली भूमि में यूरिया उर्वरक को खड़ी फसल में सिंचाई के 1-2 दिन बाद डालें ताकि उर्वरक का पानी के साथ बह कर नीचे की ओर रिसाव न हो।
- उर्वरकों का प्रयोग तब करें जब फसल को पोषक तत्वों की अधिकतम आवश्यकता हो जैसे फसल के जमाव, फुटाव व फूल आने के समय।
- फसल बोने के लिये मिट्टी को खूब भुरभुरा करना चाहिए जिससे पौधों की जड़ों का अधिक फैलाव होकर अधिक से अधिक पोषक तत्वों का उपयोग कर सकें। समय पर फसल की बुवाई एवं अनुशंसित बीज की मात्रा से कम उर्वरक से अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं। समय से पहले या देरी से बुवाई करने पर डाले गए उर्वरक की उपयोगिता कम हो जाती है एवं कीट या पौधा रोग की अधिक सम्भावना होती है।
- अमोनियम युक्त उर्वरक जैसे अमोनियम क्लोराइड, अमोनियम सल्फेट, किसान खाद व यूरिया को भूमि की ऊपरी सतह पर न डाल कर निचली सतहों में पोरने या मिलाने से, नत्रजन की गैस के रूप में होने वाली हानि से बचा जा सकता है।
- भूमि में स्थिर हो जाने वाली फास्फोरस व पोटाश पोषक तत्वों के उर्वरकों को सक्रिय जड़ क्षेत्र में ही डालें। इन्हें भूमि की ऊपरी सतह पर बिखेर कर न दें ताकि ये कम से कम मिट्टी के संपर्क में आ पाएं व जिसमें इनकी कम से कम मात्रा अप्राप्य रूप में बदलें।
- बारानी फसलों में भी उर्वरकों को संतुलित रूप में ही डालें। फास्फोरस व पोटाश फसल को विकसित जड़ विन्यास प्रदान करते हैं। जिससे फसल सूखा झेलने में अधिक सक्षम हो जाती है। सीमित नमी वाले क्षेत्रों में उर्वरक अधिक से अधिक संभव गहराई पर नमी में डालने से भी पौधे इनका भरपूर लाभ उठा पाते हैं।
- रबी की फसलों में फास्फोरस उर्वरक अवश्य प्रयोग में लाएं। क्योंकि दिसम्बर जनवरी महीने में जब अधिक ठंड व कोहरे के कारण फास्फोरस की उपलब्धता कम हो जाती है, भूमि में जैविक व रासायनिक क्रियाएं मंद पड़ जाती हैं तब फसल को इनकी अधिकतम मात्रा चाहिए। अत: जिन फसलों में फास्फोरस का प्रयोग किया जाता है उन्हीं में ही बढ़वार व पैदावार ठीक मिलती है। खरीफ फसल में यदि भूमि में प्राप्य फास्फोरस 15 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर से अधिक हो तो बिना फास्फोरस उर्वरक प्रयोग किए औसत पैदावार ली जा सकती है।
- खड़ी फसलों में पोषक तत्वों की कमी को पूरा करने में पर्णीय छिड़काव आंशिक परंतु तुरंत लाभ देता है। जस्ता, लोहा, नत्रजन व फास्फोरस की कमी पूर्ति हेतु क्रमश: 0.5% ज़िंक सल्फेट, 0.5-1.0% फैरस सल्फेट, 2.5-3.0% यूरिया व 1.5-2.0% डी.ए.पी. के घोल का प्रयोग करें। उर्वरकों का भूमि में प्रयोग अधिक हितकर होता है।
- यूरिया का छिड़काव हमेशा खरपतवार उखाड़ने के बाद करें। यदि खरपतवार का नियंत्रण करना सम्भव न हो तो ऊपर से नत्रजन (नाइट्रोजन) का प्रयोग न करें। [

(पृष्ठ4 का शेष)

समानान्तर 8-9 फुट की उंचाई पर स्थापित की जाती हैं तथा इन्हें ज़मीन के पास लाकर प्रत्येक पौधे को एक रस्सी के द्वारा लपेटा जाता है। इसकी मुख्य शाखा पर फूलों के गुच्छे लगते हैं, जिन्हें बगैर नुकसान पहुंचाये पौधों को रस्सियों के सहारे लपेटा जाता है।

हानिकारक कीड़े : खीरे का लाल भृंग: यह कीट बेलों को काफी क्षति पहुंचाता है। इससे बचाव हेतु कार्बेरिल (सेविन) (1 से 2 ग्रा. प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करें। [

आवश्यक सूचना

''**हरियाणा खेती**'' मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक (प्रकाशन)

जड़ वाली सब्जियों की काश्त : कीटों व बीमारियों से बचाव

- **अमित कुमार, नरेंदर सिंह एवं बलबीर सिंह**
सब्जी विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सब्जियों में जड़ वाली सब्जियां अपना विशेष स्थान रखती हैं। खासकर सर्दी के मौसम में किसान इनसे कम लागत में अधिक मुनाफा कमा सकते हैं। जड़ वाली सब्जियों में गाजर, मूली व शलगम अपने औषधिक गुणों के लिए जानी जाती हैं। इन्हें किसान बाज़ार की मांग के हिसाब से तोड़कर या जूस व अचार आदि बनाकर अधिक मुनाफा ले सकते हैं। आइये जानें कि इन सब्जियों की काश्त व बचाव कैसे करें :

गाजर : गाजर के लिए पूसा केसर, हिसार गैरिक, नैन्टीस आदि किस्मों का उपयोग कर सकते हैं। ये किस्में अच्छी पैदावार देने वाली हैं और इनकी औसत पैदावार लगभग 100-110 क्विंटल प्रति एकड़ है।

मूली : मूली के लिए हिसार स्वेती,जपानी व्हाईट, पूसा चेतकी व पंजाब सफेद आदि किस्मों का इस्तेमाल कर अच्छी उपज ले सकते हैं। ये किस्में 40-45 दिन में तैयार हो जाती हैं और लगभग 60-120 क्विंटल प्रति एकड़ तक पैदावार ली जा सकती हैं।

शलगम : जो किसान भाई शलगम की खेती करना चाहते हैं वे 4 व्हाईट और पर्पल टॉप व्हाईट ग्लोब आदि किस्में प्रयोग कर सकते हैं। इनकी औसत पैदावार 80-90 क्विंटल प्रति एकड़ है।

भूमि को तैयार करना : गोबर की खाद को खेत तैयार करते समय ही खेत में अच्छे से मिला दें। खेत को 2-3 बार गहरा जोतें व पाटा लगाएं। इस प्रकार करने से खेत में उचित नमी बनी रहती है।अगर खेत समतल नहीं है तो इसे भी बिजाई से पहले समतल कर लेना चाहिये।

बिजाई का उचित समय

देसी किस्मों के लिए : गाजर - मध्य सितंबर, मूली - अगस्त से सितंबर एवं शलगम - अगस्त से सितंबर।

यूरोपियन किस्मों के लिए : इन किस्मों की बिजाई ठंडे मौसम में करनी चाहिये। इनके लिए बिजाई का उचित समय अक्तूबर से नवम्बर तक है।

बीज की मात्रा : गाजर के लिए 4-5 किलोग्राम/एकड़, मूली के लिए 3 किलोग्राम/एकड़ एवं शलगम के लिए 2 किलोग्राम/एकड़ बीज पर्याप्त रहेगा।

बीजने की विधि : जड़ वाली सब्जियों को हल्की डोलियों पर बोना चाहिये। ताकि अधिक उपज के साथ-साथ अच्छी गुणवत्ता वाली जड़ें भी प्राप्त हो सकें। डोलियों के बीच की दूरी 30-45 सैं.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 6-8 सैं.मी. रखना चाहिये। बीज को डोलियों की चोटी पर 2-3 सैं. मी. गहरा डालना चाहिये।

खाद व उर्वरक प्रबंधन : खाद व उर्वरक हमेशा ज़मीन की जांच के बाद आवश्यकतानुसार डालने चाहियें। सामान्य भूमि के लिए जड़ वाली सब्जियों में 20 टन गोबर की खाद जो अच्छे से सड़ी हुई हो को खेत की जुताई के समय डाल दें। प्रति एकड़ के हिसाब से 24 किलोग्राम नाइट्रोजन व 12 किलोग्राम फास्फोरस खेत में बिजाई के समय डालें। गाजर में इनके साथ-साथ 12 किलोग्राम पोटाश की मात्रा अतिरिक्त डालें व नाइट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई पर और शेष 3-4 सप्ताह बाद दें।

(शेष पृष्ठ 10 पर)

अजोला – चारा उत्पादन एवं उपयोगिता

- **राजेश कुमार आर्य, सतपाल[1] एवं निशा**
औषधीय, सगंध एवं क्षमतावान फसलें अनुभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अजोला एक फर्न है जो कि आमतौर पानी की सतह पर तैरता रहता है। वैसे तो इसका उपयोग जैविक खाद के रूप में काफी समय से हो रहा है क्योंकि इसमें पाये जाने वाले जीवाणुओं में वायुमण्डल से नत्रजन को लेकर स्थिर करने की क्षमता होती है। जैसे की दलहनी फसलों में होती है। आजकल, इसका उपयोग पशु चारे के रूप में भी होने लगा है। क्योंकि यह दूध देनेवाले पशुओं के पोषण तथा स्वस्थ रखरखाव के लिए एक उत्तम हरा चारा है। वैसे भी अजोला अन्य चारा वाली फसलों की तुलना में वार्षिक उत्पादन अधिक देता है। अजोला में सभी प्रकार के पोषक तत्व पाये जाते हैं इसलिए यह गाय-भैंसों में वृद्धि तथा दूध उत्पादन है। उत्पादन शुरू करने के लिए शुद्ध प्रजाति का बीज विश्वसनीय स्रोत से लें। उचित समय पर 1 सैं.मी. उपज से कटाई करने से इसका उत्पादन अधिक होता है। अपने देश में पाई जाने वाली अजोला प्रजाति की लम्बाई 2-3 सैं.मी. तथा चौड़ाई 1-2 सैं.मी. होती है। अजोला चारा इसमें गोबर मिश्रित होने से आमतौर पर पशु पसन्द नहीं करते और अधिक उत्पादन के लिए गोबर का इस्तेमाल किया जाता है।

उत्पादन की विधि : अजोला तालाब, नदी, गड्ढों व टब आदि में आसानी से उगाया जा सकता है। भारत में मुख्यत: अजोला पिन्नाटा का उपयोग किया जाता है। आजकल, अधिक उत्पादन के लिए नैशनल रिसोर्स डेवल्पमैंट विधि प्रयोग की जा रही है। जिसमें प्लास्टिक शीट की सहायता से 2×2×0.2 मीटर पानी भरने के लिए क्यारी बनाते हैं। इसमें 10-15 कि.ग्रा. उपजाऊ मिट्टी तथा 2 कि.ग्रा. गाय के गोबर की खाद तथा 30 ग्रा. सुपर फास्फेट का मिश्रण भर देते हैं और दोबारा पानी भर कर जल स्तर 10 सैं.मी. तक पहुंचा देते हैं और इसमें 1 कि.ग्रा. अजोला कल्चर डालते हैं। तीव्र वृद्धि के कारण 10-15 दिनों में 500-600 ग्राम अजोला हरा चारा प्रतिदिन इस क्यारी से मिलना आरम्भ हो जाता है। प्रत्येक 5 दिन बाद, इस क्यारी में 20 ग्राम सुपर फास्फेट तथा 1 कि.ग्रा. गोबर दुबारा डालें। इसके अतिरिक्त ऑयरन, कॉपर, सल्फर आदि भी डालना चाहिए।

अजोला उपयोगिता : उपरोक्त विधि से अजोला चारा उत्पादन आसान, सस्ता तथा लाभकारी है। इससे कम खर्च में, दूध उत्पादन बढ़ाया जा सकता है क्योंकि अजोला एक बहुउपयोगी क्षमतावान पशु चारा है। गायों में दूध उत्पादन क्षमता बढ़ती है। इसे मुर्गियों के लिए सबसे अच्छा आहार माना गया है। अजोला एक निश्चित सीमा तक रासायनिक उर्वरक का एक अच्छा विकल्प है। यह पशुओं में बांझपन की दर को कम करता है।

इसे रबी व खरीफ, दोनों मौसमों में उगाया जा सकता है। अधिक उत्पादन के लिए पी.एच. मान 5-7 के बीच रखना चाहिए तथा सूरज की रोशनी की अच्छी उपलब्धता होनी चाहिए।

पोषक गुणवत्ता : अजोला में सभी आवश्यक पोषक तत्व विद्यमान होते हैं। इसमें प्रोटीन की मात्रा 25-30 प्रतिशत है जो कि लाइसिन, अर्जिनीन व मेथियोनीन का मुख्य स्त्रोत है। अजोला में लिग्निन की मात्रा कम होती है इसलिए इसका पाचन पशुओं के शरीर में आसानी से हो जाता है। इसके अतिरिक्त, पारंपरिक यूरिया खाद की जगह पर अजोला के उपयोग से उत्पादन में वृद्धि होती है क्योंकि इसमें नाइट्रोजन 28-30

[1]चारा अनुभाग, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

प्रतिशत, खनिज पदार्थ 10-15 प्रतिशत, बीटा कैरोटीन, कैल्शियम, मैगनीशियम, पोटाशियम, फॉस्फोरस, आयरन व कॉपर प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। पोषक गुणवत्ता के आधार पर अजोला को ग्रीन गोल्ड की संज्ञा भी दी जाती है।

अजोला चारा उपयोग विधि : अजोला पोषण से दूध उत्पादन 10-20 प्रतिशत तक बढ़ता है। इसका प्रयोग 60 ग्राम तक करने पर 10 प्रतिशत तक सांद्र आहार फटाया जा सकता है। संकर नस्ल की गाय में 2 कि.ग्रा. सांद्र आहार की जगह 2 कि.ग्रा. अजोला खिलाते हैं। अजोला को राशन के साथ 1:1 के अनुपात में सीधे पशुओं को दिया जा सकता है। अजोला का उपयोग पशुओं में दूध की मात्रा तथा वसा प्रतिशत बढ़ाने के लिए किया जाता है क्योंकि इसके उत्पादन में खर्च कम आता है तथा लाभ अधिक होता है। इसलिए दिन-प्रतिदिन अजोला की चारे के रूप में उपयोगिता बढती जा रही है। [

(पृष्ठ 9 का शेष)

सिंचाई प्रबंधन : गाजर में 5-6 और मूली व शलगम में 3-4 बार पानी लगाना चाहिये। पानी लगाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये की पानी डोलियों के तीन-चौथाई भाग से ऊपर न जाये।

खरपतवार नियंत्रण : खरपतवार को रोकने के लिए 2-3 बार निराई-गोड़ाई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त आवश्यकता अनुसार करें।

जड़ों की खुदाई : गाजर की देसी किस्मों को 100-130 दिन और यूरोपियन किस्मों को 60-70 दिनों बाद खोदना चाहिए। मूली की देसी किस्मों को 45-55 दिन और यूरोपियन किस्मों को 34-40 दिनों बाद करनी चाहिए। शलगम की 35-40 दिनों बाद खुदाई करनी चाहिए। जड़ों की खुदाई किस्मों और फसल की मौजूदा अवस्था पर भी निर्भर करती हैं।

हानिकारक कीट व बीमारियां

चेपा : यह कीट मुख्यत: मूली की बीज वाली फसल में नुकसान करता है। इसके शिशु व प्रौढ़ पत्तियों व फलियों का रस चूसते हैं और फसल को नुकसान पहुंचाते हैं।

रोकथाम :

1. जिन शाखाओं पर इस कीट का आक्रमण दिखाई दे उनको तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
2. मिथाइल डेमेंटान 25 ई.सी. या डाइमेंथोएट 30 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।
3. अगर सिंगरों के लिए फसल लगाई है तो 250-400 मि.ली. मेंलाथियान 50 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

आल्टरनेरिया ब्लाईट : पीले व भूरे रंग के धब्बों का पत्तों पर पाया जाना इस रोग के होने का संकेत है। कभी-कभी धब्बों में धारियां भी पाई जाती हैं।

रोकथाम :

1. खरपतवारों को खेत में न उगने दें, खेत की अच्छे से सफाई रखें।
2. इंडोफिल एम-45 या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड-50 की 400 ग्राम दवाई को 200 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव 10-12 दिन के अन्तर पर करना चाहिए। [

फल व सब्जियों का जीवन में महत्व

- **सुरेंद्र सिंह, आर.एस.सैनी[1] एवं मुकेश कुमार[2]**
सायना नेहवाल कृषि प्रौद्योगिकी प्रशिक्षण व शिक्षा संस्थान
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

ऐसा माना जाता है कि पहला सुख निरोगी काया। यदि आपका शरीर स्वस्थ नहीं है तो आप किसी भी वस्तु का सुख महसूस नहीं कर सकते। शरीर को स्वस्थ एवं ऊर्जावान बनाये रखने में विटामिन और खनिज तत्वों का खास महत्व है। ये दोनों पोषक तत्व शरीर को कई बीमारियों से भी बचाते हैं। फल व सब्जियों का हमारे भोजन में अतुलनीय योगदान है। ये हमारे भोजन का अभिन्न अंग है। इन्हें सुरक्षात्मक खुराक भी कहा जाता है क्योंकि इनमें खनिज, लवण व विटामिन प्रचुर मात्रा में होते हैं। इनके अतिरिक्त इनमें रेशा भी होता है। इन्हें नियमित रूप से आहार में शामिल करने से अनेक रोगों से बचा जा सकता है। फल व सब्जियों से मिलने वाले विटामिन व खनिज पदार्थों के बारे में नीचे विस्तार से बताया गया है:

विटामिन : विटामिन हमारे शरीर को बनाने में योगदान देते हैं और साथ ही अनेक बीमारियों से लड़ने की शक्ति प्रदान करते हैं। विटामिन दो प्रकार के होते हैं - वसा में घुलनशील ('ए','डी','ई' व 'के') एवं जल में घुलनशील ('बी' व 'सी')।

विटामिन 'ए' : आंखों की रोशनी बरकरार रखने के लिए यह विटामिन अति आवश्यक है। यह त्वचा को पोषण भी प्रदान करता है। यह एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेन्ट (जीवन रक्षक तत्व) है। यह शरीर के रोग प्रतिरोधी तंत्र को सुदृढ़ करने में भी सहायक है। विभिन्न खाद्य पदार्थों में यह विटामिन दो प्रकारों - रेटीनोल एवं बीटाकैरोटीन के रूप में पाया जाता है। सामान्यत: बीटाकैरोटीन फलों एवं सब्जियों में पाया जाता है। यह पोषक तत्व फलों एवं सब्जियों को चटख हरा, नारंगी, लाल और पीला रंग प्रदान करता है। विटामिन 'ए' टमाटर, पपीता, शकरकंदी, गाजर, कद्दू, शिमला-मिर्च, खुमानी और आम में पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

विटामिन 'बी' : ये विटामिन विभिन्न आहारों से ऊर्जा ग्रहण कर इसे शरीर में प्रसारित कर देते हैं। यह स्वस्थ रक्त का निर्माण करने में भी सहायक हैं। मुंह में छाले होना व जलन होना इसकी कमी के लक्षण हैं। भिण्डी, टमाटर, केला और हरी सब्जियां विटामिन 'बी' के अच्छे स्रोत हैं।

विटामिन 'सी' : यह शरीर में होने वाली विभिन्न क्रियाओं को सुचारू रूप से संचालित करने में सहायक है। यह मांस-पेशियों, लिगामेन्ट्स और कार्टिलेज को स्वस्थ बनाए रखने में सहायक है। घाव को शीघ्र भरने में भी यह विटामिन सहायक है। विटामिन सी एन्टी-ऑक्सीडेन्ट भी है। इस कारण यह शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाता है। नींबू, संतरा, आंवला, ताज़े फलों और सब्जियों जैसे शिमला-मिर्च, मटर और टमाटर इस विटामिन के प्रमुख स्रोत हैं।

विटामिन 'डी' : इसकी कमी से सूखा रोग व हड्डियां कमज़ोर हो जाती हैं। अण्डा, मछली, मछली का तेल, मशरूम, दूध, दही, पनीर व सूर्य की किरणें विटामिन डी के मुख्य स्रोत हैं।

विटामिन 'ई' : यह भी एंटी-ऑक्सीडेन्ट का कार्य करता है। विटामिन 'ई', फ्री रेडिकल्स (शरीर के लिए नुकसान देह पदार्थ) से होने वाली शरीर की अति को रोकता है व कोशिकाओं को सुरक्षा प्रदान करता है। शरीर में फ्री रेडिकल्स प्रदूषण और कोशिकाओं की टूट-फूट से पैदा

[1]कृषि विज्ञान केंद्र, मंडकोला
[2]कृषि विज्ञान केंद्र, बावल

होते हैं। चिकित्सकों के अनुसार विटामिन 'ई' युवा बनाए रखने में सहायक हैं व कैंसर से भी बचाव करता है। विटामिन 'ई' वृद्धा वस्था की ओर अग्रसर होने वाली कुदरती प्रक्रिया को धीमा कर देता है। हरी पत्तेदार सब्जियों में यह विटामिन पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

विटामिन 'के' : इस विटामिन की कमी से शरीर में चोट लगने पर रक्तस्राव जल्दी से नहीं रुकता। वनस्पति तेल व हरी पत्तेदार सब्जियां इसके मुख्य स्रोत हैं।

फोलिक एसिड : हमारे शरीर में खून बनाने के लिए फोलिक एसिड बहुत आवश्यक होता है। यह हरी पत्तेदार सब्जियों में पाया जाता है।

खनिज पदार्थ : खनिज तत्वों में प्रमुख रूप से आयरन, कैल्शियम, पोटाशियम, मैग्नीशियम, मैंगनीज़ और आयोडीन आदि हैं:

आयरन : हीमोग्लोबिन के निर्माण के लिए यह एक आवश्यक पोषक तत्व है। हीमोग्लोबिन रक्त में पाया जाने वाला एक ऐसा तत्त्व है जो शरीर में ऑक्सीजन का सही ढंग से प्रसार करता है। आहार में आयरन की कमी से एनीमिया नामक बीमारी हो जाती है। इसमें मरीज बेहद दुर्बल और थकान अनुभव करता है और उसे सांस लेने में भी दिक्कत होती है। इस सन्दर्भ में यह बात याद रखी जानी चाहिए कि विटामिन सी शरीर में आयरन को अवशोषित करने में मदद करता है। हरी सब्जियों जैसे पालक, मेथी, खजूर व सेब आयरन के मुख्य स्रोत हैं।

कैल्शियम : हड्डियों व दांतों की मज़बूती के लिए कैल्शियम एक आवश्यक पोषक तत्व है। शरीर में कैल्शियम की कमी से आस्टयोपोरोसिस नामक बीमारी हो जाती है व ज़रा-सा आघात लगने पर हड्डियां टूट जाती हैं। आमतौर पर बढ़ती उम्र में यह बीमारी ज़्यादा होती है। कैल्शियम दूध और इससे निर्मित उत्पादों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। फलों में यह केले, अमरूद व हरी पत्तेदार सब्जियों में पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

पोटाशियम : यह खनिज तत्व शरीर में तरल पदार्थों के संतुलन को बरकरार रखता है। मांसपेशियों के सुचारू रूप से संचालन में भी पोटाशियम सहायक है। यही नहीं यह ब्लड प्रेशर को भी नियंत्रित रखने में मदद करता है। टमाटर, चुकन्दर, केला इसके प्रमुख स्रोत हैं।

आयोडीन : आयोडीन थायरोक्सिन नामक हार्मोन के निर्माण के लिए आवश्यक है। इसके अलावा यह शरीर की चयापचय क्रिया (मेटाबोलिज्म) को भी सुचारू रूप से संचालित करने में मददगार है। पालक में आयोडीन पाया जाता है।

मैग्नीशियम : यह मांस पेशियों को स्वस्थ व सक्रिय रखने में सहायक है। यह शरीर के एंजाइम सिस्टम को भी सही रखता है। पालक, शकरकंद, सेम और अंजीर में मैग्नीशियम पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

मैंगनीज़ : यह खनिज तत्व कैल्शियम और आयरन के साथ संयुक्त होकर अपना प्रभाव छोड़ता है। शरीर के विभिन्न एंजाइमों को सुचारू रूप से सक्रिय करने में इस खनिज तत्त्व की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यह कोशिकाओं को भी स्वस्थ रखने में सहायक है। मटर, केला और अन्ननास मैंगनीज़ के प्रमुख स्रोत हैं।

शरीर को चुस्त दुरुस्त व स्वस्थ रखने के लिए अपने खान-पान व दैनिक आहार में फलों और सब्जियों को अवश्य महत्व देना चाहिए व मौसम के फल और सब्जियों का नियमित सेवन करना चाहिए ताकि शरीर के लिए आवश्यक विटामिन व खनिज पदार्थों की पूर्ति हो सके। [

फसल अवषेश जलाना : दुष्प्रभाव एवं प्रबन्धन

- **सूबेसिंह[1], प्रदीप कुमार चहल एवं भरत सिंह घणघस**
विस्तार शिक्षा विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अक्सर यह देखने में आया है कि किसान अपनी धान फसल अवशेषों को जला देते हैं। ऐसा करने से उनकी भूमि की उपजाऊ शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है तथा पर्यावरण भी प्रदूषित होता है। फसल अवशेष भूमि में जब सड़ते-गलते हैं तो भूमि में कार्बनिक पदार्थ में बढ़ोत्तरी होती है तथा मिट्टी की उत्पादकता भी बनी रहती है। इसलिए फसल अवशेष मिट्टी के पुनर्जन्म के लिए और मिट्टी की संरचना बनाये रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि इन अवशेषों को सही ढंग से उपयोग करें तो इनके द्वारा हम पोषक तत्वों के एक बहुत बडे अंश की पूर्ति कर सकते हैं। इस समस्या का मूल कारण धान-गेंहू फसल-चक्र है। इन दोनों फसल के बीच समय कम होने के कारण फसल अवशेष को जलाना किसान को आसान लगता है जबकि यह किसानों के लिए घाटे का सौदा होता है जिसकी जानकारी किसानों के पास नहीं है। किसानों द्वारा धान के पुआल को इकट्ठा करके जला दिया जाता है जबकि यह पशुओं के चारा के रूप में उपयोग किया जा सकता है। खेतों में धान के अवशेष जलने से वायुमंडल में प्रदूषण होता है इससे सल्फर, नाइट्रोजन एवं कार्बन डाईऑक्साइड आदि का उत्सर्जन होता है जो वातावरण एवं आम आदमी के लिए ठीक नहीं है।

धान के भूसे के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए विशेष रूप से कम लागत वाले उद्योगों को बढ़ावा देना चाहिए जैसे - गत्ता बनाना, कम्पोस्ट बनाना, मशरूम उत्पादन के लिए खाद बनाने में उपयोग किया जा सकता है अथवा खाद बनाने की इकाइयां तैयार की जा सकती हैं जो मशरूम उत्पादक के लिए उपयोगी होंगी। धान के भूसे को विभिन्न औद्योगिक उत्पादों को बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में उपयोग किया जा सकता है। धान के भूसे को पशुओं के नीचे बिछाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार यह गोबर व मूत्र के साथ मिलकर खाद बनाने के काम में लाया जा सकता है। धान के भूसे को सरसों के भूसे के साथ मिलाकर ईंट के भट्ठों में उपयोग में लाया जा सकता है। धान के पुआल को पलवार लगाने से मृदा में खरपतवार, नमी संरक्षण के साथ जीवांश पदार्थ की वृद्धि की जा सकती है। भूमि में जीवांश पदार्थ का उचित स्तर बनाये रखने के लिए हमारा प्रयास होना चाहिए कि अधिक मात्रा में फसल अवशेष का उपयोग किया जाए तथा कृषि क्रियाओं को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाए जो मृदा में जीवांश पदार्थ की वृद्धि में सक्रिय हो सके।

धान के भूसे/पराली को फसल में मल्च के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। धान के भूसे को मिट्टी में मिलाने से यह अधिकांश पोषक तत्व मिट्टी को लौटा देता है और मिट्टी में पोषक तत्वों को संरक्षित करने की क्षमता बढ़ाता है। किसान को धान के भूसे/पराली को न जलाने के लिए जानकारी उपलब्ध कराने के लिए सभी किसान हितकारी, आपूर्तिकर्त्ता, सेवाप्रदाता, शोधकर्त्ता, विस्तार एजेंट, नीति निर्माताओं, सिविल सेवकों को शामिल होने की ज़रूरत है। धान के भूसे का प्रबन्धन करने के लिए इसकी मशीनें सहकारी समितियों को आपूर्ति की जाएं और सब्सिडी दरों पर किसानों को उपलब्ध कराया जाए। इसके प्रचार-प्रसार के लिए विभिन्न विस्तार रणनीतियों, प्रर्दशन, खेत प्रर्दशन और किसान भ्रमण का उपयोग किया जा सकता है। इसको रोकने के लिए सरकार को सख्त कानून बनाकर उसे लागू करवाना चाहिए। धान के भूसे को जलाने की निगरानी सुनिश्चित की जानी चाहिए।

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

धान का भूसा जलाने से पड़ने वाले प्रभाव : फसल अवशेष जलने की समस्या समय के साथ-साथ बढ़ती जा रही है। धान के अवशेष जलने की तीव्रता पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और उत्तराखण्ड में सबसे अधिक देखी जाती है। जिसके द्वारा एक विशाल भौगोलिक क्षेत्र में वायु की गुणवत्ता में गिरावट देखी गई है। फसल अवशेष जलाने से वायुमंडलीय गैसो में बड़ी मात्रा में वायु प्रदूषण शामिल होते हैं। इस कारण गंभीर पर्यावरण समस्या उत्पन्न होती है साथ ही साथ कृषि और मानव स्वास्थ्य में गिरावट आती है। जिस कारण मानव को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

पर्यावरण का नुकसान: फसल अवशेष जलने से उत्सर्जित प्रमुख प्रदूषकों और कण वातावरण में शामिल होते हैं जो ग्लोबल वार्मिंग में काफी योगदान करते हैं। फसल अवशेष जलने के दौरान उत्सर्जित काला कार्बन वातावरण को गर्म करता है और यह कार्बन डाईऑक्साईड़ के बाद ग्लोबल वार्मिंग में दूसरा सबसे महत्वपूण योगदानकर्त्ता है।

मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव : धान के अवशेष को जलाने से मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ तथा पोषक तत्वों में कमी आती है। इसके साथ-साथ फसल अवशेष जलने के कारण मिट्टी में उपस्थित लाभदायक सूक्ष्म वनस्पतियों और सूक्ष्म जीवों को भी नष्ट कर देता है।

मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव : बड़े पैमाने पर धान के अवशेष जलाने से वातावरण प्रदूषित हो जाने के कारण मनुष्य के स्वास्थ को खतरा पैदा हो जाता है। जैसा कि देखा गया है बच्चे, बूढ़े व सांस के मरीज़ के लिए यह धुआं अति संवेदनशील हो जाता है। इस दौरान सांस व त्वचा की बीमारियों में अत्यधिक वृद्धि देखी गयी है। जिस कारण बच्चों, वृद्धों और श्रमिकों के स्वास्थ्य पर होने वाला खर्च बढ़ जाता है।

लाभकारी सूक्ष्म जीवाणुओं पर प्रभाव

धान की फसल अवशेष जलाने से भूमि में उपस्थित सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या में भारी कमी आती है। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति में कमी आती है।

पशुओं के चारे में कमी : किसानों द्वारा धान के पुआल को इकट्ठा करके जला दिया जाता है जबकि यह पशुओं के चारा के रूप में उपयोग किया जा सकता है। धान के भूसे को इकट्ठा करके जहां पर चारे की कमी होती है वहां पहुंचाया जा सकता है और इसके द्वारा अतिरिक्त लाभ हो सकता है।

दुर्घटनाओं में वृद्धि : फसल अवशेष जलाने से कई बार आग फैलकर आस-पास की फसल को भी नष्ट कर देती है।

धान फसल अवशेषों का प्रबन्धन : फसल अवशेष प्रबन्धन के लिए वर्तमान में निम्न उपायों को अपनाया जा सकता है। जैसे पशुधन चारा, पशुधन विस्तार, मिट्टी में मिलाना, कंपोस्टिंग, बिजली उत्पादन, मशरूम की खेती, बायोगैस, जैव ईंधन, कागज़ और लुगदी बोर्ड निर्माण इत्यादि।

धान अवशेष का खेत में प्रबन्धन : फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाने के लिए 2-3 जुताई की अतिरिक्त आवश्यकता होती है। फसल अवशेष के आकार को छोटा करने के लिए रोटावेटर/हैरो का प्रयोग करें। धान की पराली को मिट्टी में मिलाने के बाद सिंचाई करें व यूरिया खाद का इस्तेमाल करें ऐसा करने से फसल अवशेष शीघ्र गल-सड़ कर मिट्टी में मिल जाएंगे। धान की पराली में मुख्य पोषक तत्वों के साथ अल्प मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाए जाते हैं। इसलिए पौधों की वृद्धि पर सीधा प्रभाव पड़ता है। धान की पराली को भूमि में मिलाने से मृदा की भौतिक दशा, मृदा की जल धारण एवं जल शोषण की क्षमता बढ़ती है एवं मृदा के सूक्ष्म जीवों के लिए भोजन प्रदान करते हैं।

मशरूम उत्पादन के लिए : मशरूम की खेती एक लाभदायक व्यवसाय है। धान के भूसे का प्रयोग मशरूम उत्पादन के लिए किया जा सकता है। (शेष पृष्ठ 23 पर)

कृषि अवशेष : गत्ता कैसे बनाएं

- **कनिष्क वर्मा, प्रमोद शर्मा एवं वाई. के. यादव**
अक्षय ऊर्जा एवं जैव ऊर्जा अभियांत्रिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

रबी के मौसम के दौरान गेहूं, जौ, चना, सरसों, कपास और गन्ना होते हैं खरीफ मौसम में धान, ज्वार, बाजरा और मक्का। इन प्रमुख और लघु फसलों से उत्पन्न कुल अवशेष 24.697 मिलियन टन प्रति वर्ष प्राप्त होता है। इसमें से प्रमुख कृषि अवशेष गेहूं और धान के हैं जो कि कुल अवशेषों का लगभग 80% योगदान देता है। शेष राशि कपास के अवशेषों (7.78%) और सरसों (3.66%) द्वारा योगदान की जाती है। सामान्यत: किसान कृषि अवशेषों को खेत में ही जला देते हैं जिससे वातावरण प्रदूषित होता है और मिट्टी की उर्वरता भी नष्ट होती है। जिससे सोना उगलने वाली धरती जहां ऊसर होने के कगार पर है वहीं हवा भी ज़हरीली हो रही है।

कृषि अवशेष जलाने से होने वाले नुकसान : पराली जलाने से पर्यावरण के नुकसान से अधिक मिट्टी की उर्वरा शक्ति प्रभावित होती है। फसल के अवशेष को जलाने से फसल की ऊपरी परत में मौजूद सूक्ष्म जीवों को नुकसान होता है। इससे मिट्टी की जैविक गुणवत्ता प्रभावित होती है। केवल एक टन पराली जलाने से 5.5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 2.3 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 25 कि.ग्रा. पोटैशियम और 1.2 कि.ग्रा. सल्फर जैसे मिट्टी के पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं। पराली की आग की गरमी से मिट्टी में मौजूद कई उपयोगी जीवाणु और मित्र कीट भी नष्ट हो जाते हैं।

प्रबन्धन के उचित सुझाव : कृषि अवशेषों का प्रयोग जलाने की बजाये गत्ता बनाने में किया जा सकता है जिससे किसान को कई लाभ होंगे। कागज़ और कार्डबोर्ड मुख्य रूप से प्राकृतिक फाइबर-आधारित उत्पादों बांस, भांग, पपीरस, लकड़ी, कपास और धान की पराली से बनाए जाते हैं। कार्डबोर्ड भारी शुल्क कागज़ के लिए सामान्य शब्द है और इसे अक्सर पेपरबोर्ड कहा जाता है। भारत में, कागज़ उद्योग को सामान्यत: तीन खंडों में वर्गीकृत किया गया है : 1. मुद्रण और लेखन, 2. न्यूजप्रिंट एवं पेपरबोर्ड, और 3.औद्योगिक पैकेजिंग (पेपरबोर्ड)। पेपरबोर्ड सबसे बड़ा भाग है, जिसमें कुल घरेलू पेपर की मांग का 45% हिस्सा है, इसके बाद प्रिंटिंग और राइटिंग (35%) और न्यूजप्रिंट (20%) है। उद्योग को वन आधारित (21%), कृषि आधारित (23%) और पुनर्नवीनीकरण फाइबर-आधारित कागज़ (56%) में विनिर्माण कागज़ के लिए उपयोग किए जाने वाले कच्चे माल के आधार पर वर्गीकृत किया गया है।

कृषि अवशेष से गत्ता बनाने के लाभ : कृषि अवशेष को जलाने की रीत से छुटकारा मिलेगा। वातावरण दूषित नहीं होगा। मिट्टी की उर्वरकता बनी रहेगी। किसान की आय में बढ़ोत्तरी होगी। रोज़गार के अवसर प्राप्त होंगे जिससे बेरोज़गारी घटेगी।

गत्ता बनाने की विधि : कृषि अवशेषों को एकत्रित करना >कृषि अवशेष से बुरादा तैयार करना > यूरिया ग्लू के साथ मिलाकर पल्प तैयार करना > पल्प से गत्ते की शीट तैयार करना > शीट को सुखाना > कटाई।

गत्ता बनाने के लिए सबसे पहले कृषि अवशेषों को एकत्रित करके बुरादा तैयार किया जाता है। बुरादा तैयार करते समय कृषि अवशेष के साथ रद्दी अखबार भी पुनरावृत्त किया जाता है। बुरादा तैयार होने के बाद उसमें यूरिया ग्लू (गोंद) मिलाकर पल्प तैयार किया जाता है। यूरिया युक्त गोंद सबसे सस्ता और मज़बूत होता है। ग्लू बुरादे को कंठस्थ बांधने में सक्षम साबित होता है। इसके बाद पल्प को हॉट रोलर प्रेसिंग मील मे डाला जाता जो गत्ता तैयार करके निकालती है। गत्ते को कुछ समय सूखने के लिए धूप में रखा जाता है। फिर गत्ते की कटाई की जाती है। हम ज़रूरत के हिसाब से प्रेसिंग रोलर ड्रम्स की सेटिंग करके अलग-अलग मोटाई का गत्ता बना सकते हैं। इस प्रकार किसान गत्ते को उचित मूल्य में बेच कर कृषि अवशेष से भी लाभ उठा सकता है। [

दिसम्बर मास के कृषि कार्य

फसलों में

गेहूँ

यदि गेहूँ की बिजाई अब तक न कर सके हों तो इस महीने के पहले पखवाड़े तक अवश्य कर लें। इस समय की बिजाई के लिए डब्ल्यू एच 1124, राज 3765, डब्ल्यू एच 1021 व डी बी डब्ल्यू 90, एच डी 3059 ही बोएं। प्रति एकड़ 60 किलोग्राम बीज डालें व सूखे की स्थिति में लगभग 12 घंटे भिगोने के बाद बीज बोएं। जहां तक संभव हो खूडों का फासला घटाकर 18 सैं.मी. (7 इंच) कर दें। बिजाई से पहले यथोचित बीजोपचार अवश्य कर लें। धान की कटाई के बाद गेहूँ की बुवाई ज़ीरो-टिल सीड कम फर्टीलाइज़र ड्रिल मशीन से या हैप्पी सीडर से करें।

रबी फसलों में, विशेषकर गेहूं में खरपतवारों की समस्या निरंतर बढ़ती जा रही है। अत: किसानों से अनुरोध है कि खरपतवारों को पहली तथा दूसरी सिंचाई के बाद एक या दो बार निराई-गुड़ाई करके खेत से निकाल दें। खरपतवारों की रोकथाम हेतु फसल की शुरू की बढ़वार में लगभग 30 दिन के अन्दर ही एक बार निराई-गुड़ाई करें। यदि खरपतवारों की रोकथाम शाकनाशकों द्वारा करनी हो तो चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम के लिए 2,4-डी का प्रयोग करें। इसके लिए 250 ग्राम 2,4-डी (सोडियम साल्ट 80 प्रतिशत) को या 300 मि.ली. 2,4-डी (एस्टर 34.6 प्रतिशत) या एलग्रीप 8 ग्राम 250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में छिड़काव करें। गेहूँ में मालवा, जंगली पालक, हिरणखुरी व अन्य चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु कारफेन्ट्राजोन ईथाईल (एफीनिटी) 40% डी. एफ. की 20 ग्राम प्रति एकड़ या सभी प्रकार के चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु लेनफिडा 50% डी.एफ. (मैटसल्फ्यूरॉन 10%+कारफेन्ट्राजोन 40% मिश्रण) की 20 ग्राम मात्रा प्रति एकड़+0.2% सहायक पदार्थ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव बौनी किस्मों में बिजाई के लगभग 30-35 दिन बाद व देसी किस्मों में बिजाई के 40-45 दिन बाद (जब पौधों में 3-6 पत्तियां बन जाएं) करना चाहिए। ध्यान रखें 2,4-डी का प्रयोग गेहूँ की डब्ल्यू एच-283 किस्म में तथा मिलवां गेहूँ के साथ चना, सरसों आदि की फसल में न करें।

जंगली मटर, रस्सा/कंडाई और हिरणखुरी के नियंत्रण के लिए 500 ग्राम प्रति एकड़ 2,4-डी सोडियम साल्ट (80%) या 300 मि.ली. प्रति एकड़ 2,4-डी एस्टर (34.6%) का प्रयोग करें। उपर्युक्त रसायनों को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

मंडूसी या कनकी व जंगली जई का नियंत्रण

आईसोप्रोटूरान 50% घु.पा. (टोलकान, टारस, ग्रेमिनान, नोसीलोन, रक्षक, हैक्सामार, इफ्को, आईसोप्रोटूरान, एग्रीलान, मिलरोन) गेहूँ की बिजाई के 30-35 दिन बाद 800 ग्राम दवा का प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

या

आईसोप्रोटूरान 75% घु.पा. (एरिलोन, डैलरान, हिप्रोटूरान, नोसीलान, एगरोन, रक्षक) गेहूँ की बिजाई के 30-35 दिन बाद 500 ग्राम दवा का प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। ऐसे क्षेत्रों में जहां पर कनकी में आईसोप्रोटूरान प्रतिरोधकता नहीं आई है, वहां आईसोप्रोटूरान 75% (डी.ई. नोसिल) का प्रयोग लाभदायक है। प्रतिरोधकता वाले क्षेत्र में आइसोप्रोटूरान का प्रयोग बंद कर दिया गया है।

या

आईसोप्रोटूरान-सहायक पदार्थ-सेलवेट (टेन्क मिक्स) : आईसोप्रोटूरान वर्गीय खरपतवारनाशक की 3/4 सिफारिश की गई मात्रा को 250 लीटर पानी में नान-आयोनिक सहायक पदार्थ (सेलवेट) के 0.1% के छिड़काव घोल में मिलाकर बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़कें। बाज़ार में अन्य उपलब्ध सहायक पदार्थ टी पॉल व सैलविट हैं।

गेहूँ की बिजाई यदि दिसम्बर के प्रथम सप्ताह या बाद में हो तो आईसोप्रोटूरान 200 ग्राम प्रति एकड़ पहली सिंचाई के तुरंत पहले करने से जंगली जई, कनकी व बथुआ का नियंत्रण हो जाता है।

धान-गेहूँ फसल-चक्र वाले क्षेत्रों में जहां 10-15 वर्षों से आईसोप्रोटूरान का प्रयोग किया गया है वहां कनकी में इस खरपतवारनाशक के विरुद्ध प्रतिरोधकता आ गई है। अत: प्रतिरोधकता से प्रभावित इलाकों में आईसोप्रोटूरान की बजाय निम्नलिखित में से किसी एक खरपतवारनाशक का प्रयोग करना ज़्यादा उचित रहेगा :

- क्लोडीनाफोप (टोपिक या मुल्ला या प्वाइंट या रक्षक प्लस या जय विजय या टोपल) 15% घु.पा. 160 ग्राम प्रति एकड़ बिजाई के 30-35 दिन बाद;

या

- सल्फोसल्फ्यूरान (लीडर, सफल-75 या एस एफ-10) 75% घु.पा. 13 ग्राम प्रति एकड़ + 500 मि.ली. पृष्ठ सक्रिय क्रमक/चिपचिपा या सहायक पदार्थ बिजाई के 30 से 35 दिन बाद

तकनीकी सहायता :

- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- अश्वनी कुमार, संकाय सलाहकार (बागवानी)
- तरुण वर्मा, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (कीट विज्ञान)
- डी. एस. दुहन, सहायक वैज्ञानिक (सब्जी विज्ञान)
- रोहतास कुमार, सहायक वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)
- राजेश दहिया, सहायक प्राध्यापिका (गृह विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह बिढान, सहायक प्राध्यापक (पशु उत्पादन प्रबन्धन)
- सूबे सिंह, सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

या

- फीनोक्साप्रोप (पूमा सुपर) 10% ई.सी. 480 मि.ली. या फीनोक्साप्रोप (पूमा पावर) 400 ग्राम+200 ग्राम सहायक पदार्थ प्रति एकड़ बिजाई के 30 से 35 दिन बाद।

या

- पीनोक्साडैन (एक्सियल) 5 प्रतिशत ई.सी. 400 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 30-35 दिन बाद।

कनकी प्रतिरोधकता वाले क्षेत्रों में मिले जुले (चौड़ी व संकरी पत्ती वाले) खरपतवारों के नियंत्रण हेतु पीनोक्साडेन (एक्सियल) या क्लोडीनाफोप (टोपिक या मुल्ला या प्वाइंट या जयविजय) फिनोक्सोप्रोप (पूमा सुपर या पूमा पावर) की ऊपर सिफारिश की गई मात्रा की बिजाई के 30-35 दिन बाद छिड़काव करें तथा इसके एक सप्ताह बाद 2,4-डी या मैटसल्फ्यूरान (एल्ग्रीप) या कारफेन्ट्राजोन (ऐफीनीटी) या ऐलीएक्सप्रैस की सिफारिश की हुई मात्रा का छिड़काव करें। उपरोक्त रसायनों को मिलाकर छिड़काव न करें।

गेहूं में मिले जुले खरपतवारों (चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले) विशेषकर आइसोप्रोट्यूरान-प्रतिरोधी क्षेत्रों में टोटल (सल्फोसल्फ्यूरान+ मैटासल्फ्यूरान, रेडीमिक्स सहायक पदार्थ सहित) की 16 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या एटलांटिस (मिजोसल्फ्यूरान + आयडोसल्फ्यूरान सहायक पदार्थ सहित तैयार मिश्रण) की 160 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या वेस्टा (क्लोडिनाफोप + मैटसल्फ्यूरान, रेडीमिक्स) की 160 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से प्रयोग करें। ध्यान रहे कि जिन खेतों में गेहूं के बाद ज्वार या मक्की की फसल लेनी हो उन खेतों में लीडर, टोटल व एटलांटिस का छिड़काव न करें।

गेहूं में यदि कनकी के प्रति शाक प्रतिरोधकता उत्पन्न हो गई है तो इसके नियंत्रण के प्रबन्धन के लिए बिजाई के तुरंत बाद व उगने से पहले पैण्डीमैथालीन 30 ई.सी. को 2 लीटर प्रति एकड़ के हिसाब से 250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। इसी के क्रमबद्ध में उगी हुई खरपतवारनाशक पिनोक्साडेन (एक्सियल) 5% ई.सी. 400 मि.ली. या क्लोडीनाफोप 15% डब्ल्यू. पी. 160 ग्राम या सल्फोसल्फ्यूरॉन 75% डब्ल्यू. जी. 13 ग्राम या टोटल 16 ग्राम या एटलांटिस 160 ग्राम का प्रति एकड़ की दर से बिजाई के 30-35 दिन बाद 200 लीटर पानी में छिड़काव करें।

उपर्युक्त में से किसी एक शाकनाशक दवा का 200-250 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

नवम्बर माह में बीजी गई बौनी किस्मों में बिजाई से 20-25 दिन बाद तथा देसी किस्मों में 30-35 दिन बाद पहली सिंचाई अवश्य करें।

गेहूँ की पछेती किस्मों, जैसे राज 3765, डब्ल्यू एच 1124, डब्ल्यू एच 1021, डी बी डब्ल्यू 90 तथा एच डी 3059 की बिजाई के समय 65 किलोग्राम यूरिया, 150 किलोग्राम सुपरफास्फेट या 50 किलोग्राम डी ए पी तथा 20 किलोग्राम म्यूरेट आफ पोटाश प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। इसके साथ-साथ 10 किलोग्राम/एकड़ ज़िंक सल्फेट इतनी ही सूखी मिट्टी में मिलाकर, बिजाई के समय खेत में छिट्टा दें। पोटाश की सिफारिश अम्बाला व यमुनानगर ज़िलों के लिए 40 कि.ग्रा. प्रति एकड़ है। देसी किस्म, जो नवम्बर के शुरू में बोई गई थी, की पत्तियों पर यदि जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो महीने के मध्य में एक किलोग्राम ज़िंक सल्फेट, 5 किलोग्राम यूरिया मिलाकर 200 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ में छिड़काव कर दें। इसी प्रकार 15 दिन बाद ज़िंक व यूरिया से दूसरा छिड़काव करें। नाइट्रोजन खाद की बाकी आधी मात्रा पहली सिंचाई के समय डाल देनी चाहिए। देसी गेहूँ के लिए 25 कि.ग्रा. यूरिया तथा बौनी किस्मों के लिए 65 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ डालें। यदि ज़मीन अधिक रेतीली है तो इसमें नाइट्रोजन की मात्रा का आधा भाग पहली सिंचाई पर डालें और आधा भाग गेहूँ में दूसरे पानी पर डालें। खाद डालने के बाद गोड़ी अवश्य कर दें।

बीज एवं मृदाजनित रोगों से बचाव : ममनी व टुण्डू से बचाव के लिए गेहूँ के बीज से ममनीयुक्त दाने, जो रंग में काले भूरे, आकार में छोटे, गेहूँ के दानों से लगभग एक चौथाई और हल्के होते हैं, निकाल दें। बीज को पानी में डालकर इन्हें निकाला जा सकता है। गेहूँ के भारी स्वस्थ बीज पानी में नीचे बैठ जाते हैं और ममनीयुक्त दाने पानी के ऊपर तैरने लगते हैं, जिन्हें निकाल कर नष्ट कर दें और नीचे बैठे बीज को छाया में सुखा लें (बोने से पहले खुली कांगियारी से बचाव के लिए वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम या रैक्सिल-2 डी एस (एक ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से बीज का उपचार करें। बीज जनित करनाल बण्ट से बचाव हेतु बिजाई से पूर्व बीज का थाइरम 2 ग्राम या रैक्सिल-2 डी एस (1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें।

गुडगांव, महेन्द्रगढ़, भिवानी, रोहतक व फरीदाबाद ज़िलों के कुछ भागों में मोल्या नामक बीमारी के कारण खेत में कहीं-कहीं पौधे बौने, पीले व सूखे से दिखाई देते हैं। इस रोग से बचाव के लिए ऐसे खेतों में गेहूँ की फसल न लेकर सरसों, तोरिया, चना, गाजर, धनिया व मेथी बोएं और जौ की अवरोधी किस्मों बी एच-75, बी एच 393 बीजें। अत्यधिक रोगग्रस्त खेत में फ्युराडान-3 जी दानेदार दवा 13 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से खाद के साथ मिलाकर पोर दें व बिजाई करें।

दीमक से बचाव

फसल को दीमक से बचाने के लिए बिजाई के एक दिन पहले 100 किलोग्राम बीज को 150 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या 500 मि. ली. इथियान 50 ई.सी. से उपचारित करें। दवाई में पानी मिलाकर कुल 5 लीटर घोल बनाएं, फर्श पर रखे बीज पर छिड़कें तथा अच्छी तरह मिलाएं ताकि दवाई हर बीज को लग जाए। इस तरह दवाई लगे बीज को रात भर सूखने दें तथा अगले दिन बोएं।

जौ

दिसम्बर मास में बोई फसल पछेती मानी जाती है जिसमें माल्ट की पैदावार व गुणवत्ता कम हो जाती है। एक एकड़ के लिए 45 किलोग्राम बीज लेकर बीज को कतारों में 18-20 सैं.मी. की दूरी पर पोरा या केरा विधि से बोएं। समय पर बीजी गई फसल में बिजाई के 40-45 दिन बाद पहला पानी लगाएं। बिजाई के समय 26 किलोग्राम यूरिया, 75 किलोग्राम सुपर फास्फेट तथा 10 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश डालें। सुपर फास्फेट को पोरा करें, बिखेरें नहीं।

जौ में पहला पानी लगाते समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा (26 किलोग्राम यूरिया) डालें। यदि जौ की पत्तियों पर जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो अधिक पैदावार लेने के लिए गेहूँ में बताए गए (जस्ते-यूरिया के) घोल का छिड़काव करें।

बिजाई से पहले बीज का उपचार वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से सूखा उपचार करें।

जौ में दीमक से बचाव के लिए 100 किलोग्राम बीज को बिजाई से एक दिन पहले 600 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. से उपचारित करना चाहिए। दवा में पानी मिलाकर कुल 12.5 लीटर घोल बनाएं।

जौ में पहली सिंचाई के बाद एक या दो बार फसल की नलाई करें। यदि ऐसा न कर सकें तो 200-250 लीटर पानी में 400 ग्राम 2, 4-डी (सोडियम साल्ट) प्रति एकड़ को घोलकर फसल की बिजाई के 40 दिन बाद छिड़काव करने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार नष्ट हो जाते हैं या चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए एलग्रीप 20 प्रतिशत घु. पा./घु. दाने 8 ग्राम + 200 मिली. चिपचिपा पदार्थ या 2, 4 डी अमाईन 58 एस एल 500 मिली. या एफीनिटी 40 डी.एफ. (कारफेन्ट्राजोन-इथाईल) 20ग्राम प्रति एकड़ को 200 लीटर पानी में घोलकर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करें। घास जाति के खरपतवारों (कनकी, जंगली जई व लोमड़ घास) के नियन्त्रण हेतु एक्सियल 5 ई.सी. (पिनोक्साडेन) 400 मि.ली. प्रति एकड़ को 200 लीटर में घोलकर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़कें। मिश्रित खरपतवारों (संकरी व चौड़ी पत्ती वाले) के नियन्त्रण के लिए एक्सियल 5 ई.सी. 400 मि.ली. के साथ अलग्रीप 20 प्रतिशत घु. पा./घु. दाने 8 ग्राम + 200 मि.ली. चिपचिपा पदार्थ या 2, 4-डी अमाईन 58 एस.एल. 500 मि.ली. या एफीनिटी 40 डी.एफ. 20 ग्राम प्रति एकड़ को 200 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 40-45 दिन बाद छिड़काव करें।

चना

चने में आवश्यकतानुसार फूल आने से पहले एक पानी देना चाहिए। चने की पत्तियों पर यदि भूरे रंग के धब्बे दिखाई दें तो समझना चाहिए कि चने के खेत में ज़िंक की कमी है। इसलिए इस भूमि में अगली बिजाई से पहले 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट अवश्य डालना चाहिए। हरियाणा चना नं. 1 को सिंचित क्षेत्रों में दिसम्बर के मध्य तक भी बोया जा सकता है। कभी-कभी फली छेदक सूण्डी इन दिनों में फूलों व पत्तियों आदि पर आक्रमण कर देती है। अत: इसके नियंत्रण के लिए 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 400 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

नोट : किसानों से अनुरोध है कि अपने ट्यूबवैल तथा पंपिंग सैट के पानी की जांच, मिट्टी-पानी का परीक्षण प्रयोगशाला से जो कि हर ज़िले में है, करवाएं। हो सकता है आपका पानी जौ के लिए ठीक हो और चने की फसल को बिल्कुल खराब कर दे।

तोरिया, सरसों व राया

महीने के दूसरे पखवाड़े में तोरिया की पकी हुई फसल की कटाई करें तथा समय पर बीजी गई सरसों व राया की फसलों को महीने के अंत में पानी दें। यदि सरसों व राया के निचले पत्तों के किनारों का रंग गुलाबी पड़ जाए तो यह ज़िंक की कमी का कारण है। इसके लिए एक किलोग्राम ज़िंक सल्फेट, 5 किलोग्राम यूरिया को 200 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ फसल पर छिड़काव करें। पत्तियों पर सफेद फफोले वाली बीमारी से रक्षा के लिए 600 ग्राम डाईथेन एम-45 को 250-300 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़कें। बिजाई से पहले 96 कि.ग्रा. किसान खाद व 50 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट तोरिया और सरसों में प्रति एकड़ डालें। राया के लिए अमोनियम सल्फेट 160 कि.ग्रा. या 128 कि.ग्रा. किसान खाद और 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट प्रति एकड़ बिजाई से पहले डालें।

सरसों, राया तथा तोरिया पर चेपा (अल या माहू) पत्तों, टहनियों, फूलों व फलियों से रस चूस कर काफी हानि पहुंचाता है। यदि इसका आक्रमण औसत 10% फूलों वाली शाखाओं पर हो जाए तब रोगोर 30 ई.सी. को 250 से 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 से 20 दिन के अंतर पर छिड़कें। दवाई की मात्रा फसल की बढ़वार पर निर्भर करती है। साग के लिए उगाई गई सरसों पर केवल 250 से 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. का छिड़काव हर 10 दिन के अंतर पर करें और फसल को छिड़काव के बाद 7 दिन तक प्रयोग में न लाएं। लाभदायक कीड़ों, जैसे मधुमक्खियों आदि को बचाने के लिए छिड़काव दोपहर बाद करें।

सफेद रतुआ व अन्य बीमारी के लिए मैन्कोज़ेब 600 ग्राम दवा 250-300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। ये छिड़काव सफेद रतुआ बीमारी के लक्षण दिखते ही करें तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन के अंतर पर दोहराएं। ध्यान रहे इस बीमारी की रोकथाम के लिए दवाई का छिड़काव पत्तों की निचली सतह पर भी अवश्य करें।

जिन क्षेत्रों में सरसों में तना गलन (उखेड़ा) रोग का प्रकोप हर साल होता है वहां बिजाई के 45-50 दिन तथा 65-70 दिन के बाद कार्बेन्डाज़िम का छिड़काव 0.1 प्रतिशत (200 ग्राम दवाई/200 लीटर पानी) की दर से करें।

गन्ना

गन्ने की मध्य-समय में पकने वाली किस्मों की कटाई करके गुड़ बनाएं। देर से पकने वाली किस्मों को पाले से बचाने के लिए फसल में समय-समय पर पानी लगाते रहें। लाल सड़न रोग से प्रभावित खेतों से गन्ने की कटाई कर लें। ऐसे खेतों में मोढ़ी की फसल न लें।

सोनीपत, फरीदाबाद व रोहतक ज़िलों में स्केल कीड़े की समस्या बढ़ती जा रही है। कीड़ाग्रस्त फसल की शीघ्र कटाई करें और बची हुई पत्तियों व ठूंठों को जला दें। ऐसी फसल की मोढ़ी न रखें।

बरसीम व लूसर्न

बरसीम की फसल को हरे चारे के लिए कटाई करने के बाद पानी लगाएं। लूसर्न की फसल को पहला पानी दें। सर्दियों में 20-25 दिन के अंतर पर फसल को पानी देते रहें। अधिक सर्दी पड़ने पर 13 कि.ग्रा. यूरिया डालने से बढ़वार ठीक मिल जाएगी।

मसर

मसर की उन्नत किस्में है हरियाणा मसर 1, सपना व गरिमा। मसर की पछेती बिजाई इस माह के प्रथम सप्ताह तक कर सकते हैं। इसके लिए 18 से 20 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ डालें। मसर की पछेती बिजाई की सूरत में भी 15 किलोग्राम यूरिया तथा 100 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट प्रति एकड़ अवश्य ड्रिल करें। यदि सुपरफास्फेट उपलब्ध न हो तो यूरिया तथा सुपर फास्फेट की जगह अकेला 35 किलोग्राम डी.ए.पी. ही बीज के नीचे ड्रिल करें। मसर में राइजोबियम का टीका लगाना न भूलें। रेतीली ज़मीन में 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई के समय डालें।

कपास

अगले वर्ष कपास में गुलाबी सूण्डी के आक्रमण को कम करने के लिए आखिरी चुनाई के बाद खेत में भेड़, बकरी तथा दूसरे पशुओं को चरने के लिए अवश्य छोड़ दें ताकि ये पौधों के साथ कीट-ग्रसित टिण्डों को खा जाएं। उसके बाद छंटियों को ज़मीन में गहराई से काटें ताकि दोबारा फुटाव

न हो सके और बाद में अगले वर्ष सूण्डियों व मीलीबग को अपनी पहली पीढ़ी को चलाने के लिए खुराक बहुत कम मिले। छंटियों को सूखने के बाद झाड़ कर ही गांव में ले जायें तथा नीचे गिरे कचरे को जला कर नष्ट कर दें ताकि गुलाबी सूण्डी, मीलीबग व अन्य कीड़े नष्ट हो जाएं।

सब्जियों में

टमाटर

खेत को दूसरी फसल के लिए तैयार करें। नर्सरी में की गई बिजाई की देखभाल करें। इस माह भी नर्सरी में बिजाई की जा सकती है। पिछले माह बताई गई किस्मों को प्रयोग में लें तथा बिजाई से पहले 2.5 ग्राम एमिसान या कैप्टान या थाइरम दवा से प्रति किलोग्राम बीज का उपचार करें। कम तापमान होने के कारण अंकुरण तथा पौध की बढ़वार धीमी होगी। जल्दी अंकुरण तथा पौध को पाले से बचाने के लिए नर्सरी को रात में पॉलीथीन की शीट से ढक कर रखें।

बैंगन

नर्सरी में पौध की देखभाल करें। इस माह भी (यदि बिजाई पहले नहीं की है) बिजाई की जा सकती है। किस्म व बीज की मात्रा व बीजोपचार के सम्बन्ध में पिछले माह बताया जा चुका है। पौधे को पाले से बचाने का प्रबंध करें।

मिर्च

नर्सरी में की गई बिजाई की देखभाल करें। नर्सरी में बिजाई इस माह के प्रथम पखवाड़े में भी की जा सकती है। ठण्ड होने से बीजों को उगने में अधिक समय लगेगा तथा पौध की बढ़वार धीमी होगी। नर्सरी में पौध को पाले से बचाएं।

फूलगोभी

खेत में लगी फसल की देखभाल करें। जैसा कि पिछले माह बताया जा चुका है, खड़ी फसल में दो बार यूरिया खाद देकर सिंचाई करें- पहली बार रोपाई के लगभग तीन-चार सप्ताह बाद तथा फिर पौधों में गांठ बनते समय सिंचाई करें। पछेती किस्म की पौध तैयार हो तो खेत में रोपाई करें।

हानिकारक कीड़ों (चेपा, कूबड़ वाला कीड़ा और डायमण्ड बैकमॉथ) से बचाव के लिए 400 मि.ली. मैलाथियॉन 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर दस दिन बाद दोबारा छिड़काव करें। दवा छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें। डायमण्ड बैकमॉथ सूण्डी के लिए ऊपर लिखी कीटनाशक या 400 ग्राम बैसिलस थुयरिनाजिएंसिस (बायोआस्प घु. पा.) या 300 मि.ली. डायजिनान 20 ई.सी. (वासुडीन/बैंजानीन) या 60 मि.ली. नुवान 76 ई.सी. का प्रति एकड़ छिड़काव करें।

बन्दगोभी व गांठगोभी

खेत में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। फसल को यूरिया खाद दो बार दें-पहली बार रोपाई के 3-4 सप्ताह बाद तथा फिर पौधों में गांठ बनते समय (हर बार लगभग 35 कि.ग्रा. यूरिया खाद प्रति एकड़)। पछेती किस्मों की पौध की तैयार खेत में रोपाई करें। कीड़ों की रोकथाम फूलगोभी में बताए ढंग से करना आवश्यक है।

पालक

फसल में नियमित सिंचाई करें तथा खड़ी फसल में दो बार नाइट्रोजन खाद (हर बार 22 कि.ग्रा. यूरिया खाद प्रति एकड़) दें। पहली बार बिजाई के 4 सप्ताह बाद व फिर इसके 4 सप्ताह बाद। किसान खाद देने के बाद सिंचाई करें।

मूली, शलगम व गाजर

जड़ वाली फसलों की समय पर बिजाई करें। खुली हुई जड़ों पर मिट्टी चढ़ाएं। विलायती किस्मों की बिजाई छोटे पैमाने पर इस माह भी की जा सकती है। सिंगरों के लिए उगाई फसल पर यदि सूण्डी या अल का आक्रमण हो तो 250-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। दवा प्रयोग के बाद एक सप्ताह तक सब्जियां खाने के काम में न लें।

मटर

बिजाई के लगभग 4-6 सप्ताह बाद यूरिया खाद (13 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से) देकर सिंचाई करें। पछेती फसल में निराई करें, खरपतवार निकालें।

मटर की फसल की हानिकारक कीटों से रक्षा करें। मटर की थ्रिप्स (चूरड़ा) से बचाव के लिए प्रति एकड़ 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो दो सप्ताह बाद दोबारा छिड़काव करें। पत्तों में सुरंग बनाने वाले कीड़ों से रक्षा के लिए 400 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. का 200-250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। दवा प्रयोग के बाद तीन सप्ताह तक फसल खाने के काम में न लाएं।

सफेद चूर्णी रोग (पत्तियों, फलियों पर आटे जैसा सफेद चूर्ण दिखाई देता है) का प्रकोप होने पर प्रति एकड़ 500 ग्राम घुलनशील गंधक या 200 ग्राम बाविस्टिन या 80 मि.ली. कैराथेन 40 ई.सी. को 200 लीटर पानी में घोलकर खेत पर छिड़काव करें तथा आवश्यकतानुसार 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

लहसुन

फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। नाइट्रोजन खाद (35 किलोग्राम यूरिया खाद प्रति एकड़) की अभी तक टॉप ड्रेसिंग कर चुके होंगे।

(रबी) प्याज़

प्याज़ की पनीरी इस माह तैयार हो जाएगी। अत: समय से खेत को तैयार करें। एक एकड़ खेत में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद बिखेर कर जुताई करें। रोपाई से पहले प्रति एकड़ 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया खाद), 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (120 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 कि.ग्रा. पोटाश (16 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) खेत में दें। खेत को उचित नाप की क्यारियों में बांट लें। रोपाई का सबसे अच्छा समय इस माह के आखिरी सप्ताह से जनवरी का प्रथम सप्ताह है। रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई अवश्य करें।

आलू

मिट्टी चढ़ाते समय नाइट्रोजन खाद दे चुके होंगे। खेत की नियमित सिंचाई करें तथा हानिकारक कीटों व बीमारियों से रक्षा करें। हानिकारक कीटों, मुख्यत: चेपा (अल), से बचाव के लिए प्रति एकड़ फसल पर 300 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में घोलकर

10-15 दिन के अंतर पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें। ध्यान रखें कि आलुओं की खुदाई से कम से कम तीन सप्ताह पूर्व दवाओं का प्रयोग बंद कर दें। इन कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से विषाणु रोग पर भी नियंत्रण हो जाएगा क्योंकि ये कीट ही इस बीमारी को फैलाते हैं। विषाणु रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट करें, यदि कच्ची फसल निकालनी हो तो 70-75 दिनों पर निकालें तथा बाज़ार बेचने के लिए भेजें।

फलों में

इस महीने में ठंड पड़नी शुरू हो जाएगी। इसलिए सदाबहार पौधों को पाले से बचाना आवश्यक है। जहां तक संभव हो सके बागों की सिंचाई भी करते रहें, ताकि पाले का कम से कम असर हो। इस महीने करीब-करीब सारी फसलों में कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी खाद भी डालें और आने वाले बसंत मौसम में सदाबहार के पौधे लगाने के लिए खड्डों की खुदाई व भराई का काम शुरू कर दें ताकि पौधे फरवरी के शुरू में ही लगाए जा सकें। आड़ू व अलूचा के पौधे दिसम्बर तथा बेर व आंवला के पौधे मध्य फरवरी के अंत तक लगाए जा सकते हैं। बेर, आंवला व अमरूद वैज ग्राफ्टिंग से तैयार करने के लिए पौधों की काट-छांट कर लें।

संगतरा, माल्टा, नींबू आदि

किन्नो के पके फलों को इस माह तोड़ लें ताकि अगली फसल अच्छी हो। बाग से घास-फूस नष्ट करने के लिए खरपतवारनाशक दवाई का प्रयोग करें। पौधे के नीचे 4-6 इंच से गहरी गुड़ाई न करें। इस माह के अंत तक पौधों को निम्नलिखित मात्रा में गोबर की खाद दें और सिंचाई भी करें। सिंगल सुपर फास्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश मिट्टी जांच के आधार पर डालनी चाहिए।

पौधों की आयु	गोबर खाद (प्रति पौधा)	सिंगल सुपर फास्फेट (कि.ग्रा.)	म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्राम)
1 से 3 साल	10 से 40 कि.ग्रा.	0.250-0.750	100
4 से 6 साल	40 से 70 कि.ग्रा.	1.0-1.500	150
और उससे अधिक	100 कि.ग्रा.	2.0	175

बाग की सिंचाई 20 दिन में एक बार करें। पुराने बागों में पेड़ों की सूखी हुई लकड़ी व शाखाओं को काटें।

सूखी व कैंकर रोगी टहनियों को काटकर 1.5 किलोग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 500 लीटर पानी में बने घोल से तीन छिड़काव करें। तने पर बोर्डो पेस्ट का लेप करें।

आम

गोबर की खाद व फास्फोरस इसी महीने में डालें, 10 साल के पौधे में तने से 1 मीटर की दूरी छोड़कर पूरी छतरी में गोबर खाद 100 कि.ग्रा. व 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट डालें।

मिलीबग के बच्चे ज़मीन में से निकलकर तनों से होकर पौधों पर चढ़ते हैं। इनको चढ़ने से रोकने के लिए ज़मीन से 0.5 से 1 मीटर की ऊंचाई तक 25-30 सैं.मी. चौड़ी चिकनी अल्काथीन (250-400 गेज की पॉलिथीन) की पट्टी लगाएं। इस पट्टी को लगाने से पहले तने की सूखी छाल 5-8 सैं.मी. चौड़ी पट्टी के बराबर को कुल्हाड़ी से उतार कर बराबर कर लें। फिर 5 सैं.मी. चौड़ी गर्म लुक (तारकोल) की तह पर अल्काथीन नीचे व ऊपर चिपकाएं। अल्काथीन मुलायम होने के कारण कीड़े ऊपर नहीं चढ़ सकेंगे। पौधों का अन्य भाग ज़मीन से नहीं छूना चाहिए। यह काम मध्य-दिसम्बर तक कर लें।

सूखी व रोगी टहनियों को काट दें। 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल (300 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड 100 लीटर पानी में) से छिड़काव करें।

बेर

दर्मियानी व पछेती किस्मों में सफेद चूर्णी या पाऊडरी मिल्ड्यू से बचाव के लिए घुलनशील गंधक (सल्फर 400 ग्राम 200 लीटर पानी में) या केराथेन (200 मि.ली. 200 लीटर पानी में) का घोल बनाकर छिड़काव करें। मध्य-दिसम्बर में फल मक्खी के लिए 500 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

आड़ू व अलूचा

आड़ू (शर्बती, प्लोरिडासन, प्रभात, सर रेड) व अलूचा (काला अमृतसरी, सतलुज परपल) के पौधे इस महीने के अंत में लगाए जा सकते हैं। आड़ू में हर वर्ष टहनियों को एक-तिहाई काट दें। इस माह के अंत में कटाई-छंटाई आरंभ कर सकते हैं। गोबर की सड़ी खाद फास्फोरस व पोटाश इस माह के अंत तक डालें और अच्छी तरह गुड़ाई करके बाग की सिंचाई करें।

आंवला

15 दिसम्बर तक सभी फलों की तोड़ाई पूरी कर लें अन्यथा फ्रूट नक्रोंशीश बीमारी का प्रकोप बढ़ जाता है। इस समय आंवला में विटामिन-सी भरपूर मात्रा में उपलब्ध होता है।

अमरूद

बाग की सिंचाई करें व फसल की देखभाल करें। अगर पत्ते हल्के पीले रंग के हों तो 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट व 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करें। फल को पेड़ पर पकने न दें।

अन्य फलों में

अंगूर की कटाई-छंटाई का कार्यक्रम जनवरी माह में करना होगा, इसलिए कैंची, ब्लाईटॉक्स या बेनलेट और ज़िंक सल्फेट आदि का प्रबंध अभी से करें।

पशुओं में

गाय-भैंस

सर्दी से पशुओं के बचाव के लिए अपने पशुघर का प्रबंध ठीक ढंग से करें। इसमें हवा के आवागमन और वर्षा से बचाव का भी उपाय होना चाहिए। पशुओं का बिछावन सूखा होना चाहिए और इसे समय-समय पर बदलते रहना चाहिए। पशुओं को ठण्डी हवा से बचाना चाहिए।

इस मौसम में भैंसें नए दूध होती हैं। ब्याने के डेढ़-दो मास बाद भैंस में गर्मी के लक्षण (मदकाल) दिखाई देने चाहिएं। भैंस को गर्मी में आने के 10-12 घण्टों के बाद एक अच्छे झोटे से मिलवाना चाहिए या निकट के कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र से नए दूध करवाना चाहिए। यदि भैंस गर्मी में न आती हो तो उसे पशु चिकित्सक को दिखाएं। नियमित रूप से भैंस को

गर्मी में आने के लिए यह आवश्यक है कि उसको संतुलित आहार व 30-50 ग्राम खनिज मिश्रण प्रतिदिन खिलाएं। भैंसें अधिकतर रात को या सुबह के समय गर्मी के लक्षण दिखाती हैं। जब ये गर्मी में आती हैं तो बार-बार पेशाब करती हैं और बोलती हैं, चारा कम खाती हैं और इनकी दूध की मात्रा भी घट जाती है। इसके अतिरिक्त ये कुछ बेचैनी के लक्षण भी दिखाती हैं। कई भैंसों में गर्मी की पहचान बहुत कठिनाई से होती है क्योंकि इनकी गर्मी गूंगी रहती है। यदि नसबंदी कराया हुआ झोटा भैंसों के समूह में छोड़ दिया जाए तो गर्मी में आई भैंसों की आसानी से पहचान की जा सकती है और इससे आप ठीक समय पर अपनी भैंस का प्रजनन करा सकते हैं।

पशुओं को गलघोंटू एवं मुंह व खुरपका बीमारी से बचाव का टीका अवश्य लगवाएं। बीमार पशु को तुरंत अलग कर पशु चिकित्सक से उपचार करवाना चाहिए।

अपने पशुओं को कृमिनाशक दवाइयां पशु चिकित्सक की सलाह से पिलाएं। यदि दुधारू पशुओं को कृमिहीन न किया जाए तो उनमें दूध देने की क्षमता और छोटी आयु के पशुओं में विकास घट जाता है। बाह्य परजीवियों की रोकथाम के लिए भी उचित प्रबंधन करना चाहिए तथा पशु-आवास को भी नियमित अंतराल पर कीटाणुनाशक घोल से साफ करना चाहिए।

यदि बरसीम के साथ सूखा चारा न दिया जाए और बरसीम गीली हो तो पशुओं के पेट में गैस के कारण अफारा आ सकता है। इससे बचने के लिए पशुओं के वज़न के हिसाब से 2 प्रतिशत सूखे चारे आहार में अवश्य प्राप्त होने चाहिएं। यदि अफारा आ जाए तो पशु को 50-60 मि.ली. तारपीन का तेल, 10 ग्राम हींग, आधा किलोग्राम सरसों या अलसी के तेल में मिलाकर देने से अफारा ठीक हो जाता है।

गाय-भैंस का दूध थन को अंगुलियों और अंगूठे के बीच दबाकर न निकालें। पूरे हाथ से अंगूठा बाहर रखकर पूर्ण हस्त विधि द्वारा ही दूध निकालें। दूध निकालने से पहले तथा बाद में लाल दवा के कीटाणुनाशक घोल से थनों को अच्छी तरह साफ करना चाहिए।

यदि गाय-भैंस का गोबर पतला हो जाए तो तुरंत अपने पशु चिकित्सक से सलाह लें।

भेड़-बकरी

भेड़-बकरी को स्वस्थ रखने के लिए उन्हें कृमिनाशक दवाई पिलानी आवश्यक है। यह दवाई आप अपने पशु चिकित्सक की सलाह से पिलाएं। यह चिकित्सालय से मुफ्त में मिलती है।

सर्दियों के मौसम में भेड़-बकरियों को सर्दी से बचाना भी ज़रूरी है। खास कर मेमनों को ठंडी हवाओं से बचाना चाहिए। मेमनों का फर्श सूखा रखना चाहिए।

कुक्कुटों में

मुर्गियां

मुर्गियों से अधिक अण्डे प्राप्त करने के लिए मुर्गीघर में रोशनी का ठीक प्रबंध होना चाहिए। दिन और रात की कुल रोशनी मिलाकर 16 घण्टे होनी चाहिए।

मुर्गियों का बिछावन यदि गीला हो जाए तो उसे सूखे बिछावन से बदल दें। मुर्गियों के बिछावन को दिन में तीन-चार बार पलटना चाहिए।

जो मुर्गियां अभी अण्डे नहीं देने लगी हैं और कुछ दिनों के बाद अंडे देने लगेंगी, उनकी चोंच कटवा लें क्योंकि अण्डे देने के दौरान ये मुर्गियां आपस में लड़ती हैं और एक दूसरे को ज़ख्मी कर देती हैं जिससे इनकी अण्डे देने की क्षमता घट जाती है।

मांस के लिए रखे ब्रायलरों को 6-8 सप्ताह की आयु में बेच देना चाहिए।

यदि मुर्गियों का आहार संतुलित नहीं है तो आप मुर्गी आहार, पशु पोषाहार विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय, लुवास, हिसार की प्रयोगशाला में जांच कराएं तथा आप उनकी सलाह से परिवर्तित दाना बनाएं। यदि ठंडी हवा चलती हो तो खिड़कियों में झूल लगा दें और मुर्गीघर में बुरादे की बुखारी का प्रयोग करें।

मुर्गीदाने में रेशा 6-7 प्रतिशत और नमक की मात्रा 0.6 प्रतिशत से ज़्यादा न हो। दाने को सूखी जगह पर रखें। बीमार मुर्गियों को अलग घर में ले जाएं।

घर-आंगन में

- भोजन में ताज़ी सब्जियों का प्रयोग करें।
- मौसमी सब्जियों का अचार, चटनी व मुरब्बे के रूप में प्रयोग करें।
- कच्चे सलाद का ज़्यादा से ज़्यादा सेवन करें।
- सर्दी में हरी पत्तेदार सब्जियों का अधिक से अधिक इस्तेमाल करें।
- घर के कामकाज के लिए व नहाने के लिए गुनगुने पानी का इस्तेमाल करें।
- गर्म ऊनी वस्त्रों को समय-समय पर धूप दिखाती रहें।
- त्वचा की खुश्की दूर करने के लिए तेल या ग्लिसरीन का प्रयोग करें।
- मूंगफली, तिल, चने व गुड़ के पौष्टिक लड्डू बनाएं व बच्चों और बड़ों को खाने के लिए दें। यह लड्डू स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होते हैं। महिलाएं इनका सेवन स्वयं भी अवश्य करें। इससे कार्य करने की शक्ति मिलेगी व घर तथा खेत के कार्य करने में परेशानी नहीं होगी।

भण्डारित अनाज की कीड़ों से रक्षा

अगर अनाज अच्छी तरह से सुखा कर, कीट-रहित व सूखे भण्डार में ढककर भण्डारित किया है तो उसके कीड़ों अथवा नमी से खराब होने की संभावना बहुत कम है। फिर भी भण्डारित अनाज का समय-समय पर निरीक्षण करना चाहिए। यह क्रिया वर्षा ऋतु में बहुत महत्वपूर्ण होती है। यदि अनाज में कीड़ा लगा हो तो इसमें जहरीली गैस छोड़ने वाली दवाई एल्यूमिनियम फास्फाईड (सैल्फास, क्विनलफॉस, फास्फ्यूम) की 7 गोलियां (3 ग्राम) प्रति 1000 घनफुट या 28 घनमीटर स्थान के हिसाब से डालें और 7 दिन तक भण्डार बंद रखें। इन दवाइयों का प्रयोग पूरी सावधानी से किसी विशेषज्ञ की देखरेख में करें।

बारानी क्षेत्रों में सरसों की वैज्ञानिक खेती

- **कुलदीप सिंह, अमित कुमार एवं सुरेंद्र कुमार शर्मा**
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसमें लगभग 70 प्रतिशत वर्षा दक्षिण-पश्चिमी मानसून के समय मात्र चार महीने में होती है। भारत का लगभग 60 प्रतिशत कृषि क्षेत्र असिंचित है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था काफी हद तक मानसून पर निर्भर करती है। यदि हमारे देश के वर्षा आधारित क्षेत्रों में विकास किया जाए व उन्नत कृषि तकनीकों व जल संरक्षण तकनीकों को टिकाऊ तरीके से अपनाया जाए तो कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

देश का बहुत बड़ा क्षेत्र सुखाग्रस्त होने के कारण सभी सुविधाएं होने के बावजूद हमारी खाद्य-सुरक्षा व पोषण सुरक्षा को खतरा महसूस होता है। हरियाणा प्रांत का लगभग 20 प्रतिशत हिस्सा असिंचित क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। सरसों इस क्षेत्र की प्रमुख तिलहनी फसल है। इसकी खेती मुख्य रूप से बीज के लिए की जाती है, जिससे तेल प्राप्त होता है। तेल निकालने के बाद बची हुई खली पशुओं को खिलाने तथा खाद के रूप में प्रयोग की जाती है। इसकी पत्तियां हरी सब्जी के रूप में प्रयोग की जाती हैं तथा सूखे तने को ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। सरसों के तेल की तीव्र गंध सिनिग्रिन नामक एलकालॉएड के कारण होती है। शुष्क क्षेत्रों की परिस्थितियों में एक ऐसी फसल की आवश्यकता है जो कि कम से कम सिंचाइयों में अधिक उपज व आर्थिक लाभ दे सके। अत: सरसों ऐसी फसल है जिसकी खेती विभिन्न प्रकार की मृदा में कम पानी में की जा सकते है। सरसों की खेती में लागत बहुत कम होती है तथा श्रमिकों की कम आवश्यकता होती है।

वर्गीकरण

सरसों वर्ग में सम्मिलित अनेक फसलों में से तोरिया, सरसों, राई ऐसी उल्लेखनीय फसलें हैं जिनकी खेती बारानी क्षेत्रों में अत्यधिक की जाती है। तारामीरा नामक चौथी फसल भी इसी वर्ग में आती है। इनमें राया सरसों का क्षेत्र सर्वाधिक है अत: इसकी उन्नत खेती के लिए निम्नलिखित सस्य क्रियाएं की जाती हैं :

जलवायु : हरियाणा में सरसों की खेती शरद (रबी) की ऋतु में की जाती है। इस फसल को 18° से 25° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। अधिक तेल उत्पादन की उपज के लिए तोरिया और सरसों को ठंडा मौसम, साफ और खुले आसमान की आवश्यकता होती है। सरसों 25 से 40 सैं.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह से लगाई जा सकती है।

मृदा : सरसों की खेती रेतीली से लेकर भारी मृदा में की जा सकती है। लेकिन हल्की दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। भारी मृदा में बुवाई के तुरन्त बाद हल्की बौछार होने से पपड़ी बन जाती है जिससे अंकुरण घट जाता है।

खेत की तैयारी : बीज के अच्छे अंकुरण व जमाव के लिए खेत को अच्छी तरह तैयार करना आवश्यक है। असिंचित क्षेत्रों में वर्षा के पहले जुताई करके खरीफ मौसम में खेत पड़ती छोड़ना चाहिए, जिससे वर्षा के पानी का संरक्षण हो सके। उसके बाद हल्की जुताइयां करके खेत तैयार करना चाहिए। सीमित नमी वाले क्षेत्रों में रीजर सीडर से बिजाई का बहुत अच्छा परिणाम मिलता है। क्योंकि यह मशीन ऊपर की सूखी मिट्टी हटा कर नम मिट्टी में खुड के भीतर बीज डालती है जिसमें अंकुरण पर्याप्त होता है।

उन्नत किस्में

आर एच 30, टी 59, आर एच 819, आर एच 725, आर एच 761, आर एच 781, आर एच 406, आर एच 119

बीज की मात्रा व उपचार : बुवाई के लिए शुष्क क्षेत्रों में 4 से 5 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त रहता है। बुवाई से पहले बीज को 2.5 ग्राम मैन्कोजेब प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

बुवाई का समय एवं विधि: सरसों की बुवाई के लिए उपयुक्त तापमान 25-26° सेल्सियस रहता है। बारानी में सरसों की बुवाई 25 सितम्बर से 10 अक्तूबर व राया के लिए 30 सितम्बर से 20 अक्तूबर एवं तारामीरा की सारे अक्तूबर में की जाती है। कतार से कतार की दूरी 45 सैं.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सैं.मी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : सरसों की फसल को खाद एवं उर्वरक की संतुलित मात्रा में आवश्यकता होती है। इसके लिए असिंचित क्षेत्रों में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व 20 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. सल्फर की सिफारिश की जाती है।

निराई एवं गोड़ाई : अगर पौधों की संख्या अधिक हो तो बुवाई के 20-25 दिन बाद निराई के साथ छंटाई कर पौधे निकालने चाहिएं।

फसल चक्र : बारानी क्षेत्रों में चने के साथ कतारों में सरसों आने से अच्छी आमदनी होती है। चने की 4 से 6 कतारों के बाद एक कतार सरसों की लगाई जाती है।

पौध संरक्षण

चितकबरा कीड़ा/ आरा मक्खी : अंकुरण के 10 दिन में कीट अधिक नुकसान पहुंचाते हैं इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति हैक्टेयर की दर से प्रात: या सांयकाल में बुरकें।

माहू/चेपा : रोकथाम हेतु 800 मि.ली. रागोर 30 ई.सी. 800 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

सफेद रतुआ : लक्षण दिखाई देते ही फसल बोने के 45, 60 व 75 दिन बाद मैन्कोज़ेब 2 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

मरगोज़ा : पौधों को बीज बनने से पहले ही उखाड़ कर नष्ट करें। इसके लिए ग्लाइफोसेट खरपतवारनाशक की 25 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 40 दिन बाद व 50 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 55-60 दिन बाद 125-150 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

कटाई : सरसों की फसल फरवरी-मार्च तक पक जाती है। सरसों के पत्ते झड़ने लगे और फलियां पीली पड़ने लगें तो फसल की कटाई कर लें। कटाई के बाद पौधों को छोटे-छोटे बंड़लों में बांधकर खेत में छोड़ देते हैं। पौधे पूर्ण रूप से सूख जाने पर ट्रैक्टर या डंडों से मड़ाई करके ओसाई कर बीजों को अलग कर लिया जाता है। उन्नत किस्म का बीज व उचित सस्य क्रियाएं तथा पौधा संरक्षण अपनाने पर सरसों की उपज लगभग 20-30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक ली जा सकती है। [

सहजन : कृषि वानिकी उपयोगी पेड़ व इसकी विशेषताएं

- **बलवान सिंह मंडल, नीलम मंडल[1] एंव अनील कुमार[2]**
कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बाला शहर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सहजन [हिन्दी: सहजन, मुनगा, पंजाबी: सोहंजन, संस्कृत: भोभंजन, शिग्रु, अंग्रेजी: ड्रम स्टिक प्लांट, वानस्पतिक नाम: मोरिंगा ओलिफेरा] लम्बी फलियों वाली एक सब्जी का पेड़ है, जोकि भारत और दुनिया भर में उगाया जाता है। विज्ञान ने प्रमाणित किया है कि इस पेड़ का हर भाग स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक है। भारतीयों के लिए गर्व की बात है कि यह मूलत: उत्तर भारत से ही दुनिया भर में फैला है। सहजन का वृक्ष मध्यम आकार का होता है और यह किसी भी प्रकार की ज़मीन पर उगाया जा सकता है। गर्म और नमी वाले मौसम में यह बढ़िया वृद्धि करता है। सहजन के बीज से पौधा तैयार किया जा सकता है। नर्सरी में इसकी पौध बीज या कलम से तैयार की जा सकती है। सहजन के बीज बोने से पहले रात भर पानी में भिगोकर रखें, सुबह बीज फोड़कर अंदर वाली गुठली को ही बोयें। पौधरोपण बरसात या फरवरी-मार्च में करना चाहिये। अगर एक से अधिक पौधे लगाने हों तो उनके बीच कम से कम 7-8 फीट का फासला अवश्य हो। खेत की बाड़ में इसे तीन से चार मीटर के फासले पर लगाया जा सकता है। हरियाणा में सहजन कृषि वानिकी का भी हिस्सा बन सकता है। सहजन का पेड़ कहीं भी आसानी से लगाया जा सकता है। हालांकि यह पौधा बिना पानी के भी ज़िन्दा रहता है, अगर इसे आवश्यकता भर का पानी मिलता रहे तो यह साल भर फल दे सकता है। इसकी जड़ों में पानी तभी डालना चाहिए जब ज़रूरत हो। कम लागत और कम देखभाल वाली सहजन की फसल एक हैक्टेयर में 52-56 टन पैदावार देती है। सहजन के पेड़ पर लगभग आठ माह में ही फलियां लगने लगती हैं। निकारागुआ देश में पशु चारे के लिए इसकी सघन खेती की जा सकती है। वहां इसकी पौध 6 इंच के फासले पर लगाई जाती है और कटाई बरसीम की तरह 75 दिन के अंतराल पर की जाती है। एक बार पौध रोपण के बाद कई वर्ष तक हरे चारे की कटाई हो सकती है। इसके पेड़ से हरे चारे के साथ-साथ सब्जी के लिए फलियां व पत्तियां प्राप्त की जा सकती हैं। यह तेज़ी से बढ़ने वाला पेड़ है अत: टिम्बर प्राप्त करने की दृष्टि से भी इसे उगाया जा सकता है। भोजन और उपचार के अतिरिक्त सहजन का प्रयोग पानी साफ करने और हाथ धुलने के लिए भी किया जा सकता है।

हर मर्ज की एक दवा: सहजन की हो जहां हवा

शीर्षक पढ़कर आश्चर्य हो रहा होगा, परन्तु यह सही है कि 300 से अधिक बीमारियों का ईलाज अकेले सहजन से सम्भव है। सहजन या सोहांजना बहुत ही जाना-पहचाना नाम है। गांव-देहात में बहुत लोगों ने इसकी फलियों का अचार खाया होगा और पत्तियों व फूलों की सब्जी भी। गांव में इसे देसी ऐंटीसेप्टिक भी कहते हैं। दक्षिण भारत में यह बहुत लोकप्रिय है। यहां इसकी पत्तियों का उपयोग सांभर और तरकारियों में उसी प्रकार किया जाता है जैसे उत्तर भारत में हरी मिर्च और अदरक, परन्तु उत्तर भारत में यह उपेक्षित है।

इतना जाना-पहचाना और सहज उपलब्ध होने के बावजूद इसके गुणों को भुला देने के कारण ही हमने इसकी उपेक्षा की।

पिछले 10-15 वर्ष पहले वैज्ञानिकों ने इसके गुणों को पहचाना और अब यह कुपोषण और बीमारियों के नियंत्रण के लिए सबसे चहेता पेड़ बन गया है और इसके गुणों के कारण इसे चमत्कारिक वृक्ष की संज्ञा दी गयी है। दुनिया की कुछ स्वयंसेवी संस्थाएं जैसे ट्रीज़ फॉर लाईफ, चर्च वर्ल्ड सर्विस और एजुकेशनल कन्सर्न फॉर हंगर ऑर्गेनाईज़ेशन आदि इसके पोषक और औषधीय गुणों के कारण इसे लोकप्रिय बनाने में जुटी हैं।

अफ्रीकी देशों में कुपोषण मिटाने के लिए बच्चों को इसके पत्तों और फलियों का साग खिलाया जा रहा है। यही नहीं गाय के दूध की वृद्धि के लिए इसका उपयोग हरे चारे के रूप में भी किया जा रहा है। गुणों की खान होने के कारण भारतीय मूल का यह पेड़ अब पश्चिमी, पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका, उष्ण कटिबंधीय एशियाई देशों, लेटिन अमेरिका, कैरेबियन व प्रशांत देशों और फ्लोरिडा आदि स्थानों पर बड़े पैमाने पर उगाया जा रहा है। इसलिए अब ज़रूरत है सहज रूप से उपलब्ध सहजन को सहेजने की जिससे इस चमत्कारिक वृक्ष के गुणों से सहज ही लाभान्वित हुआ जा सके और जानिए ऐसे:

सहजन का हर भाग उपयोगी: पत्तियां - सिर दर्द, नेत्र रोग, अस्थमा, ट्यूमर, मोच व सूजन, पेट के कीड़े, हिचकी, हृदय रोग आदि में उपयोगी। फूल - मांसपेशियों के रोगों में उपयोगी। फलियां - यकृत, तिल्ली, पित्तदोष, स्नायुदुर्बलता, कुष्ठ, श्वेत कुष्ठ, फोड़ा आदि में फलियों का साग लाभकारी व बलवर्धक। बीज - नेत्र रोग व सिर दर्द में उपयोगी। बीजों का तेल जोड़ों के दर्द व कुष्ठ रोग में लाभकारी। छाल - मेनीनजाईटिस, गले के छाले, गैस, आंतरिक सूजन, यकृत रोग में उपयोगी। गोंद - दांत, कान का दर्द आदि में उपयोगी। जड़ - सिर दर्द, नेत्र रोग, सांस के रोग, पाचन, तिल्ली का बढ़ना, बवासीर, दाद, बुखार, त्वचा रोग, गुर्दे व मूत्र रोग आदि में उपयोगी।

सहजन के फायदे :

सहजन की पत्ती : इसकी पत्तियों में प्रोटीन, विटामिन 'बी6' विटामिन 'सी', विटामिन 'ए', विटामिन 'बी', आयरन, मैग्नीशियम, पोटैशियम, ज़िंक जैसे तत्व पाए जाते हैं। इसकी फली में विटामिन 'सी' और पत्ती में कैल्शियम प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। सहजन में एंटीऑक्सिडेंट, बायोएक्टिव प्लांट कंपाउंड होते हैं।

सहजन की सूखी पत्तियों के 100 ग्राम पाऊडर में दूध से 17 गुना कैल्शियम और पालक से 25 गुना अधिक आयरन होता है। इसमें गाजर से 10 गुना अधिक बीटा-कैरोटीन होता है, जोकि आंखों, स्किन और रोगप्रतिरोधक तंत्र के लिए बहुत लाभदायक है। सहजन में केले से 3 गुना अधिक पोटैशियम और संतरे से 7 गुना अधिक विटामिन 'सी' होता है, पत्तियां प्रोटीन का भी बेहतरीन स्रोत हैं। एक कप ताज़ी पत्तियों में 2 ग्राम प्रोटीन होता है। यह प्रोटीन किसी भी प्रकार से मांसाहारी स्रोतों से मिले प्रोटीन से कम नहीं है क्योंकि इसमें सभी आवश्यक एमिनो एसिड्स पाए जाते हैं।

सहजन की फली और पत्ती का सूप पीने या दाल में सहजन की पत्ती मिलाकर बनाने से बदलते मौसम के असर से बचाव होता है। यह रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ाकर ऐसे मौसम में होने वाले सर्दी-जुकाम होने से रोकता है। यहां तक कि एड्स के रोगियों को दी जाने वाली एंटी रेट्रोवायरल उपचार के साथ यह हर्बल सप्लीमेंट के रूप में दिया जाता है।

पेट की समस्याओं के लिए कारगर : सहजन हल्का रेचक है, अत: यह पेट साफ करता है। फाइबर की वजह से यह कब्ज़ दूर करता है। पेट के

[1]राजकीय (स्नातकोत्तर) महाविद्यालय, पंचकूला
[2]कृषि विज्ञान केन्द्र, दामला (यमुनानगर)

सहजन में पाई जाने वाली विशेषताएं

किन-किन रोगों में उपयोगी है	क्या करता है	उपयोग	100 ग्राम सूखी पत्तियों में पोषक तत्वों की मात्रा
अल्सर व रसौल, आंखों के रोग, आंत्रशोथ, कान के रोग, खांसी, गले के रोग, ग्रंथियों की सूजन, गुर्दे के रोग, घाव, जुकाम, जोडों का दर्द, ड्रॉप्सी, त्वचा रोग, तिल्ली का बढ़ना, दमा, नेत्र लेश्मला शोध-कॅन्जॅन्क्टिवाईटिस, पीलिया, पेट के कीड़े, फोड़े व फुंसी, ब्लड प्रेशर, बुखार-मलेरिया, वायरल बुखार, मधुमेह-डायबिटीज़, मिरगी, मुहांसे, मूत्राशय के रोग, मोच, रक्ताल्पता- अनीमिया, रक्त विकार, शुक्राणुओं की कमी, सांस के रोग, स्कर्वी, सूजन, सिर दर्द, सुजाक-गोनोरिया, हैज़ा, दस्त-अतिसार, पेचिश, क्षय रोग-टी.बी.	सहजन का रोज़ उपयोग किया जाए तो बहुत से रोग तो ऐसे हैं जो पास फटकने की हिम्मत ही न कर पाएं। ऐसा इसलिए कि यह शरीर की रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ सूक्ष्म जैविक क्रियाओं को भी दुरुस्त करता है, जैसे। शरीर में मेटाबॉलिक क्रियाओं को बढ़ाता है। कोशिकाओं की वृद्धि को नियमित करता है। प्राकृतिक सीरम कोलेस्टेरॉल को बढ़ाता है। जिगर और किडनी की स्वाभाविक कार्यप्रणाली को प्रोत्साहित करता है। पाचन प्रक्रिया को व्यवस्थित करता है। रक्त संचार प्रणाली को सुदृढ़ करता है। शरीर में शर्करा स्तर को सामान्य बनाता है। शरीर के स्वाभाविक सुरक्षातंत्र को मज़बूत करता है। मस्तिष्क व आंखों का पोषण करता है। शरीर की ऊर्जा बढ़ाता है। एंटी ऑक्सीडेन्ट के रूप में कार्य करता है। प्रति-उद्दीपक (एंटीइन्फलेमेटरी) के रूप में कार्य करता है। त्वचा की झुर्रियां दूर कर त्वचा का पोषण करता है। कुपोषण को दूर करता है।	। पत्तियों, फूल, फलियों व बीजों का औषधि के रूप में उपयोग।। पत्तियां व फलियां सब्जी के रूप में प्रयोग की जाती हैं। दक्षिण भारत में फलियों को सांभर में डाला जाता है।। फलियों का अचार बनाया जाता है।। बीज पानी शुद्ध करने के काम आते हैं।। बीजों से 30-40 प्रतिशत तेल प्राप्त होता है जो जैतून के तेल के समकक्ष है और बाज़ार में बेन तेल के नाम से बिकता है।। खल प्राकृतिक खाद के रूप में उपयोगी और पानी शुद्ध करने के काम आती है।। सहजन के वृक्ष भू-क्षरण रोकने में उपयोगी हैं।। पत्तियों का पशु चारे के रूप में उपयोग। स्वीडिश युनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चरल साईंस, उपासला द्वारा निकारागुआ में किये अनुसंधान में पता चला कि गायों को चारे के साथ सहजन की दो से तीन किलो सूखी पत्तियां खिलाने से दूध उत्पादन में 50 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई। जो गाय सामान्य चारा खा कर 3.1 किलो दूध देती थी, वह गाय सहजन की पत्तियां मिला चारा खाने के बाद 4.91 से 5.07 किलो दूध देने लगी। इस प्रकार दूध में 1.8 से 1.97 किलो की वृद्धि दर्ज की गयी। सहजन की पत्तियां खिलाने से दूध के रंग और स्वाद में कोई अंतर नहीं आया। सहजन की हरी पत्तियां हरे चारे के रूप में पशुओं को खिलाई जा सकती हैं। हरियाणा के जिन क्षेत्रों में हरे चारे की कमी है और पशु चारे के लिए वृक्षों में सहजन विशेष उपयोगी है।। फिलीपींस और सेनेगल में कुपोषण उन्मूलन कार्यक्रम के अन्तर्गत बच्चों को सहजन खिलाया जा रहा है और इसके बहुत उत्साहवर्धक परिणाम सामने आये हैं।	। कैलोरी : 205। प्रोटीन : 27.1 ग्राम । वसा : 2.3 ग्राम। कार्बोहाईड्रट : 38.2 ग्राम। रेशा : 19.2 ग्राम। कैल्शियम : 2003 मि.ग्रा.। मैग्नीशियम : 368 मि.ग्रा. । फास्फोरस : 204 मि.ग्रा.। पोटैशियम : 1324 मि.ग्रा.। कॉपर : 0.57 मि.ग्रा.। सल्फर : 870 मि.ग्रा. । ऑक्ज़ेलिक एसिड :1.6 मि.ग्रा. । विटामिन 'ए' (बीटा सीरोटीन) : 16.3 मि.ग्रा. । विटामिन 'बी$_1$' (थाईमिन) : 2.64 मि.ग्रा. । विटामिन 'बी$_2$' (राईबोफ्लुविन) : 20.5 मि.ग्रा.। विटामिन 'बी$_3$' (निकोटिनिक एसिड) : 8.2 मि.ग्रा.। विटामिन 'सी' (एस्कार्बिक एसिड) : 17.3 मि.ग्रा.। विटामिन 'ई' : 113 मि.ग्रा.। अर्जिनिन : 1.33%। हिस्टिडिन : 0.61%। लाईसिन : 1.32% । ट्रिप्टोफन : 0.43% । फिनॉयलेनेलिन : 1.39%। मीथिओनिन : 0.35%। थ्रिओनिन : 1.19%। ल्यूसिन 1.95% । आईसोल्यूसिन : 0.83% । वैलिन : 1.06%। इनके अतिरिक्त सहजन में विटामिन 'बी$_6$', विटामिन 'के', ओमेगा 6, ज़िंक आदि भी होते हैं।

सहजन के पोषक तत्वों की अन्य महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थों से तुलना (प्रति सौ ग्राम)

पोषक तत्व	सामान्य भोजन	सहजन	
		हरी पत्तियां	सूखी पत्तियां
विटामिन ए	1.8 मि.ग्रा. गाजर	6.8 मि.ग्रा.	16.3 मि.ग्रा.
कैल्शियम	120 मि.ग्रा. दूध	440 मि.ग्रा.	2003 मि.ग्रा.
पोटैशियम	88 मि.ग्रा. केला	259 मि.ग्रा.	1324 मि.ग्रा.
प्रोटीन	3.1 ग्राम दही	6.7 ग्राम	27.1 ग्राम
विटामिन सी	30 मि.ग्रा. संतरा	220 मिग्रा	17.3 मिग्रा

कीड़े और जीवाणुओं से भी सहजन मुक्ति दिलाता है। सहजन की जड़ का पाऊडर पेट में पाए जाने वाले राउंड वर्म को खत्म करता है।

वज़न घटाने में सहायक : जानिए कैसे ? सहजन में ड़ाईयूरेटिक गुण होते हैं जोकि शरीर की कोशिकाओं में अनावश्यक जल को कम करता है। इसके एंटी-इन्फलेमेटोरी गुण शरीर की सूजन कम करते हैं। फाईबर से भरपूर सहजन शरीर में फैट अवशोषण कम करता है। इन्सुलिन रेजिस्टेंस कम करके यह अनावश्यक फैट जमने को रोकता है।

दूध पिलाने वाली माताओं के लिए सहजन बहुत बढ़िया है: सहजन की पत्ती को घी में गर्म करके प्रसूता स्त्री को दिए जाने का पुराना रिवाज़ है। इससे दूध की कमी नहीं होती और जन्म के बाद की कमज़ोरियों जैसे थकान आदि का भी निवारण होता है। बच्चे का स्वास्थ्य सही रहता है और वज़न भी बढ़ता है। सहजन में पाए जाने वाला पर्याप्त कैल्शियम किसी कैल्शियम सप्लीमेंट से कई गुना अच्छा है।

यह ब्लड़ शुगर लेवल और कोलेस्ट्रॉल लेवल संतुलित करता है: ये हाई ब्लड़ शुगर लेवल को कम करता है। कोलेस्ट्रॉल कम करने की वजह से यह हृदय के लिए अच्छा है।

हृदय रोग, मेटाबोलिक डिसऑर्डर जैसे डायबिटीज़, इन्सुलिन रेजिस्टेंस आदि की वजह से होने वाली जलन और सूजन से सहजन राहत दिलाता है। सहजन की पत्ती के अतिरिक्त इसकी फली, फूल, बीज में भी यह गुण पाए जाते हैं। सहजन की सब्जी खाने से भी यह लाभ उठाये जा सकते हैं।

यह कैंसर प्रतिरोधी है : इसके एंटी ऑक्सिडेंट, Kaempferol, Quercetin, Rhamnetin तत्व एंटी-कैंसर होते हैं। यह स्किन, लीवर, फेफड़े और गर्भाशय के कैंसर होने से सुरक्षा करता है।

सहजन के एंटी ऑक्सिडेंट शरीर की कोशिकाओं की मरम्मत करते हैं। न्यूट्रीशनल गुणों से भरपूर सहजन एनर्जी की कमी पूरी करता है और जल्दी थकान नहीं होने देता, इसमें पाए जाने वाले बेहतरीन एमिनो एसिड्स बनाते नए टिश्यूस बनाते हैं। अत: यह शरीर के विकास के लिए लाजवाब है।

किडनी स्टोन समस्या में कारगर: यह किडनी में जमे अनावश्यक कैल्शियम को शरीर से बाहर निकालता है इससे स्टोन नहीं बनने पाता और यह किडनी स्टोन से होने वाले दर्द और जलन को भी कम करता है।

थाईरॉइड रोगी : जिनकी थाईरॉइड ग्लैंड अधिक सक्रिय होती है को सहजन अवश्य खाना चाहिए। सहजन खाते हैं तो बढ़ा हुआ थाईरॉइड स्राव कम होने लगता है। थाईरॉइड रोग की दो कंडीशन गंभीर रोग और हैशिमोटा की बीमारी दोनों के लिए सहजन का सेवन रोग मुक्ति दिलाता है।

बढ़िया हेयर टॉनिक है : सहजन का ज़िंक, विटामिन और एमिनो एसिड्स मिलकर केराटिन बनाते हैं। जोकि बालों की बढ़वार के लिए बहुत आवश्यक है। सहजन की फली में मिलने वाले बीज में एक खास तेल होता है जिसे ठमद वपस कहते हैं। यह तेल बालों को लम्बे, घने करता है और डैंड्रफ, बाल झड़ने की परेशानी दूर करता है। अत: सहजन की सब्जी खाएं, सूप पियें या पत्ती के पाऊडर का सेवन करें।

कई स्किन रोगों में सहजन का उपयोग करके लाभ उठा सकते हैं। सहजन का तेल सोरायसिस, एक्ज़िमा रोग में लगायें, फायदा होगा, बीजों का यह तेल यानि बेन ऑयल, डस्ट और ब्लैक हैड्स समस्या में चेहरे पर लगायें। इसका क्लींजिंग और ऐंटीसेप्टिक गुण इन्हें खत्म करता है। स्किन के लिए उपयोगी विटामिनों, एंटीओक्सिडेंट गुणों से भरपूर यह तेल चेहरे की झुर्रियां और महीन लकीरें दूर करता है।

फूलों की चाय न्यूट्रीशनल गुणों से भरपूर है : यह चाय यूरिन इन्फेक्शन, सर्दी-जुकाम ठीक करती है। सहजन के फूल सलाद के रूप में भी खाए जाते हैं। सहजन के इतने फायदे हैं कि गिनती कम पड़ जाये। सहजन अनिद्रा, अस्थमा, हाईपरटेंशन, गठिया, आर्थराईटिस, एनीमिया, आंत का अल्सर भी ठीक करता है और घाव जल्दी भरता है। दिमागी स्वास्थ्य के लिए सहजन लाजवाब है। सहजन डिप्रेशन, बेचैनी, थकान, भूलने की बीमारी ठीक करता है।

स्वास्थ्य लाभ के अतिरिक्त पानी साफ करने में भी कारगर है। जिसका सदियों से प्रयोग होता रहा है। इसके बीजों को कूटकर पानी में मिलाने से हानिकारक शैवाल और प्रदूषक तत्व अलग हो जाते हैं।

जानवरों के लिए एक बढ़िया चारा है : दूध देने वाले जानवर अधिक दूध देते हैं और मांस के लिए पाए जाने वाले मवेशी खूब स्वस्थ रहते हैं।

सहजन का तेल (Ben oil) उड़ता नहीं है, इसलिए घड़ियों में प्रयोग किया जाता है। यह बेन आयल कभी खराब नहीं होता। इस मीठे तेल की कोई खुशबू नहीं होती। अत: ये इत्र परफ्यूम बनाने में उपयोग किया जाता है।

सहजन से प्रोटीन, ज़िंक, पोटैशियम, मैंगनीज़, मैग्नीशियम, आयरन, कॉपर, कैल्शियम, विटामिन 'सी', विटामिन 'बी3', विटामिन 'बी2', विटामिन'बी', विटामिन'ए' आदि सारे विटामिन आपकी थाली में मिलेगें।

सहजन शरीर के भिन्न अंग जैसे : मस्तिष्क, नेत्र, कान, दांत, गला, फेफडे, हृदय व रक्त संचार, यकृत, आमाशय, तिल्ली, पित्ताशय, गुर्दे, छोटी आंत, बडी आंत, मूत्राशय, त्वचा, घुटने व जोडों का दर्द, मांसपेशियां व हड्डियों के लिए लाभकारी है। [

एक कदम स्वच्छता की ओर

पौधों द्वारा भारी धातुओं के प्रदूषण का समाधान

- **प्रतिभा, सोनाली एवं सुषमा शर्मा**[1]
आणविक जीव विज्ञान, जैव प्रोद्योगिकी एवं जीव सूचना विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पिछली शताब्दी से वैश्विक औद्योगीकरण, युद्ध और प्राकृतिक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप जैव मण्डल में बड़ी मात्रा में हानिकारक तत्वों की वृद्धि हुई है। वर्तमान समय में प्रदूषण सम्पूर्ण विश्व की एक जटिल समस्या है। उदाहरण के लिए प्रत्येक वर्ष 11,000 टन पारा जैवमंडल में छोड़ा जाता है। प्रदूषक दो मुख्य वर्गों में आते हैं : अकार्बनिक और कार्बनिक। अकार्बनिक प्रदूषकों की श्रेणी में भारी धातुएं आती हैं जैसे कैडमियम, पारा, सीसा आदि। कार्बनिक प्रदूषकों में विस्फोटक, रासायनिक खाद, खरपतवारनाशक और कीटनाशक शामिल हैं। प्रदूषण विकासशील देशों के एक बड़े हिस्से को प्रभावित करता है। परिणामस्वरूप किसान खाद्य उत्पादन के लिए प्रदूषित जल और भूमिका उपयोग करने के लिए बाध्य हैं।

प्रदूषक धातु : भारी धातु फसल को नुकसान पहुंचाती है जैसे कि फसल की पैदावार, मिट्टी की प्रजनन क्षमता और खाद्य शृंखला में एकत्रण। पारा ज़हरीला है और हमारी खाद्य शृंखला में मिलकर शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली, तंत्रिका तंत्र और शारीरिक विकास पर बुरा प्रभाव डालता है। आरसेनिक युक्त पानी को पीने से चर्म रोग तथा किडनी एवं मूत्राशय कैंसर होने की बहुत भारी संभावना है। कृषि में अधिक मात्रा में आरसेनिक के इस्तेमाल से मिट्टी की गुणवत्ता व फसल की पैदावार में गिरावट आती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार करीबन 4 करोड़ बांग्लादेशियों को आरसेनिक मिलावट की वजह से जान का खतरा हो सकता है।

परंपरागत उपचार रणनीतियां : परंपरागत उपचार में आमतौर पर प्रदूषित स्थानों से दूषित पदार्थों का भौतिक निष्कासन और एक निर्धारित स्थान पर उनका निपटान शामिल है।

भौतिक उपचार रणनीतियां इस समस्या को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं कर पाती हैं और केवल इसका स्थानांतरण करती हैं। इसके अतिरिक्त ये रणनीतियां न केवल महंगी है, अपितु पर्यावरण के लिए विघटनकारी हैं व अस्थाई रूप से विभिन्न रसायनों के सम्पर्क में वृद्धि कर सकती हैं और अक्सर अवशिष्ट पदार्थ भी छोड़ सकती हैं।

फाइटोरेमेडिएशन क्या है और यह कैसे काम करता है : फाइटोरेमेडिएशन का अर्थ है - पौधों का उपयोग करके मिट्टी और सतह के जल से प्रदूषक को हटाकर या कम करके वातावरण को शुद्ध करना। इसे पर्यावरण के अनुकूल एक सस्ते, टिकाऊ और प्रभावी विकल्प के रुप में प्रस्तावित किया गया है। पौधे प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा सौर ऊर्जा का प्रयोग करके जड़ों द्वारा मिट्टी से जल व रसायनों को अवशोषित करते हैं। इस प्रकार पौधे प्राकृतिक क्रियाओं द्वारा दूषित पदार्थों को उतनी गहराई तक साफ कर पाते हैं, जितनी गहराई तक इनकी जड़ें पहुंच पाती हैं, जैसे कि :

- प्रदूषकों को जड़, तना या पत्तियों में एकत्र कर लेना।
- उन्हें कम हानिकारक रसायनों में बदल देना।
- उन्हें भाप में परिवर्तित करके हवा में छोड़ देना।
- प्रदूषकों को अपनी जड़ों में सोख लेना, जहां उन्हें मिट्टी में रहने वाले जीवाणु कम हानिकारक रसायनों में तोड़ देते हैं।
- पौधे 'हाइड्रोलिक नियंत्रण' द्वारा दूषित भूजल के प्रवाह को स्वच्छ क्षेत्रों में मिलने से भी रोकते हैं।

फिर इन पौधों को क्षेत्र से हटाकर नष्ट कर दिया जाता है।

एक आर्दश फाइटोरेनेडिएशन में निम्नलिखित प्रमुख गुण होने चाहिएं :

[1]बीज विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

1. प्रदूषक के प्रति सहनशीलता
2. प्रदूषक को तोड़ने या उच्च मात्रा में जैव भार में इकट्ठा करने की क्षमता।
3. व्यापक जड़ प्रणाली
4. भारी मात्रा में मिट्टी से जल को अवशोषित करने की क्षमता।
5. तीव्र विकास दर और उच्च जैव भार स्तर

प्रक्रिया में कितना समय लगता है : एक स्थान को साफ करने में कई वर्ष लग सकते हैं। सफाई समय कई कारकों पर निर्भर करता है, जैसे-

1. प्रदूषक की मात्रा
2. दूषित क्षेत्र की गहराई तथा क्षेत्रफल
3. पौधों का विकास समय और मौसम आदि

उपरोक्त कारक एक स्थान से दूसरे स्थान पर निर्भर होते हैं। पौधों को खराब मौसम, कीट या जानवरों से क्षतिग्रस्त होने पर पुन: प्रत्यारोपित करना पड़ सकता है और सफाई समय को बढ़ा सकता है।

क्या यह सुरक्षित है : यह कम जोखिम वाली और आर्कषक सफाई विधि है। वन्य जीवों को प्रदूषित पौधों को ग्रहण करने से बचाने के लिए बाड़ या अन्य बाधाएं बनाई जा सकती हैं। कुछ मामलों में पौधे हवा में रासायनिक वाष्प छोड़ सकते हैं। फोटो वोलेटिलाइज़ेशन (Photovolatization) एक ऐसी स्थिति में हवा का नमूना लेकर यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि कहीं ये जानलेवा तो नहीं।

फाइटो रेमेडिएशन क्यों उपयोग किया जाना चाहिए : यह पर्यावरण के अनुकूल एक सस्ती, टिकाऊ और प्रभावी सफाई विधि है। क्योंकि यह :

- पौधों की प्राकृतिक क्रियाओं का लाभ उठाता है।
- अन्य सफाई विधियों की तुलना में कम उपकरण व कम श्रम लगता है।
- अधिकांश काम पौधे करते हैं तो यह ऊर्जा को भी बचाता है।
- मिट्टी के कटाव को भी रोकता है।
- स्थान को आर्कषक बनाता है।
- आस-पास की वायु गुणवत्ता में सुधार करता है।

फाइटो रेमेडिएटर पौधों के उदाहरण : सरसों, पोपलर, सूरजमुखी, कैनोला, भारतीय घास आदि प्रमुख उदाहरण हैं।

भविष्य संभावनाएं : पौधों की कुछ प्रजातियां प्रदूषण के प्रति सहनशील होती हैं और प्रदूषित क्षेत्र में जीवित रहने की क्षमता रखती हैं। ऐसी प्रजातियों की पहचान करके लोगों को अवगत करवाने की आवश्यकता है जिनकी बढ़ोत्तरी ज़्यादा हो और जो कम समय में अधिक जैव भार देकर ज़्यादा मात्रा में प्रदूषकों का सफाया कर सकें। [

(पृष्ठ 12 का शेष)

पशु चारा के लिए : धान का भूसा चारे के रूप में उपयोग किया जाता है। धान के भूसे में मवेशियों के लिए पाचन ऊर्जा और आवश्यक पोषक तत्वों की कम मात्रा पाई जाती है। जबकि धान का भूसा अधिक पाचनशील होता है परन्तु जहां तक हो सके ज़मीन के करीब से काटना चाहिए।

बिजली उत्पादन : बिजली उत्पादन एक आर्थिक विकल्प है लेकिन वर्तमान में केवल कुछ ही संयंत्र काम कर रहे हैं जो न के बराबर हैं।

पशुओं के बिछावन के लिए : यह मवेशियों के नीचे बिछाने के लिये काम में लिया जा सकता है। यह जानवरों के मूत्र का शोषण करके इसे नष्ट होने से बचाता है। गोबर व मूत्र के साथ मिश्रित होकर इन्हें खाद के गड्ढे में समान रूप से बिछाने में सहायक होता है। खाद के विच्छेदन में सहायक होते हैं। कार्बन नाइट्रोजन अनुपात स्थिर रखकर नाइट्रोजन को नष्ट होने से बचाते हैं। धान फसल से प्राप्त भूसा और पराली पशुओं के नीचे बिछाली के रूप में बिछाने के लिए सबसे अच्छी सामग्री है। इसकी खाद में पौधे के लिए लगभग सभी पोषक तत्वों का समावेश होता है। इसलिए इनको मृदा में मिलाने से मृदा उर्वरता में वृद्धि होती है। [

फसल अवशेष जलाने से समस्या एवं समाधान

- **मनजीत, जोगिन्दर सिंह मलिक एवं सूबे सिंह**[1]
प्रसार शिक्षा विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय प्रांगण, हिसार

भारतीय आबादी का मुख्य व्यवसाय कृषि और पशुपालन है। इसमें सालाना लगभग 500 मिलियन टन से अधिक फसल अवशेष पैदा होते हैं। इन अवशेषों को मुख्य तौर पर पशुचारे के रूप में उपयोग किया जाता है तथा इसके साथ साथ यह घरेलू और औद्योगिक ईंधन का भी स्रोत हैं। लेकिन हाल ही के वर्षों में मानव श्रम की कमी, परंपरागत तरीकों से फसल अवशेषों को हटाने में कमी और फसलों की कटाई के लिए नवीनतम मशीनों के उपयोग के कारण फसल अवशेषों को जलाने की समस्या बढ़ रही है। उत्तर भारत विशेषत: पंजाब, हरियाणा व उत्तरप्रदेश में चावल, गेहूं, कपास, मक्का, गन्ना और बाजरा की फसलों के अवशेषों का एक बड़ा हिस्सा मुख्य रूप से आगामी फसल की बुवाई के लिए क्षेत्र को साफ करने के लिए खेत में जला दिया जाता है जो आज की बड़ी समस्या बन गया है। फसल अवशेषों को जलाना पर्यावरण प्रदूषण के साथ-साथ मानव-स्वास्थ्य के लिए खतरनाक साबित हो रहा है। दूसरी ओर यह ग्लोबलवार्मिंग को भी बढ़ावा दे रहा है। जिसके कारण ग्रीनहाऊस गैसों का उत्पादन बढ़ रहा है। इसके परिणाम स्वरूप गर्मी की अवधि साल दर साल बढ़ रही है जो सारे विश्व के लिए एक चिंता का विषय बनी हुई है। इसका दूसरा विपरीत प्रभाव मिट्टी के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है जिसके कारण मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं सल्फर जैसे पोषक तत्वों का नुकसान होता है। मिट्टी के पोषक तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए किसान की उत्पादन लागत में भी वृद्धि हुई है। हाल ही के वर्षों में भारतीय कृषि प्रतिकूल जलवायु का सामना कर रही है क्योंकि सूखे, बाढ़, फसल उत्पादकता में कमी, दिन-प्रतिदिन कीटों एवं बीमारियों के बढ़ते हुए प्रकोप जैसी विभिन्न समस्याएं किसानों की आय में असुरक्षा का कारण बनकर सामने खड़ी हैं। इसके साथ यह एक विरोधाभास है कि फसल अवशेषों का जलाना और चारे की अपर्याप्तता दोनों मुद्दे इस देश में मौजूद हैं। कहीं न कहीं ये दोनों मुद्दे एक दूसरे से जुड़े हुए भी हैं। जिससे हाल ही के वर्षों में देश में चारे की कीमतों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। एक उत्पादक और लाभप्रद तरीके से अवशेषों का प्रबंधन करने के लिए संरक्षण कृषि एक अच्छा अवसर प्रदान करती है। संरक्षण कृषि आधारित प्रौद्योगिकियों को अपनाने के साथ इन अवशेषों का उपयोग मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार, फसल उत्पादकता में वृद्धि, प्रदूषण घटाने और कृषि की स्थिरता और लचीलेपन में वृद्धि के लिए किया जा सकता है ।

फसल अवशेषों को जलाने के मुख्य कारण : श्रमिकों की कमी/अनुपलब्धता, फसल अवशेषों के प्रबन्धन के लिए कटाई के दौरान उच्च मज़दूरी, आगामी फसल की बुवाई के लिए समय की कमी, किसानों में पर्यावरण के बारे में जागरूकता की कमी, विशेष रूप से कटाई के उपयोग में मशीनीकरण का उपयोग बढ़ाना, पशुधन की संख्या घटना, खेत में फसल अवशेष कंपोस्टिंग में लंबी अवधि लेना, आर्थिक रूप से व्यावहारिक वैकल्पिक समाधान की अनुपलब्धता, फसल अवशेष (भूसे) के लिए एक बड़ी परिवहन लागत, भूसे के लिए भंडारण सुविधा की कमी, चावल फसलों के भूसे का कम पौष्टिक मूल्य, फसल अवशेष के लिए बाज़ार की कमी, आदि।

फसल अवशेषों का उपयोग : फसल अवशेषों का उपयोग विभिन्न रूप जैसे पशु चारा, कंपोस्टिंग, बिजली उत्पादन, जैव ईंधन उत्पादन और मशरूम की खेती के लिए किया जा सकता है। इसके अलावा कई अन्य

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

कार्यों छप्पर, चटाई और खिलौना बनाने में भी फसल अवशेषों का उपयोग सदियों से हो रहा है।

1. पशुओं का चारा: भारत में फसल अवशेष पारंपरिक रूप से पशुचारे के रूप में उपयोग किए जाते हैं। हालांकि फसल अवशेष अप्रत्याशित और पाचन में कम होने के कारण पशुधन के लिए एकमात्र राशन नहीं बना सकते हैं। फसल अवशेषों में कम घनत्व वाले रेशेदार पदार्थ होते हैं तथा इनमें नाइट्रोजन कम, घुलनशील कार्बोहाइड्रेट, खनिज और विटामिन अलग-अलग तथा कम मात्रा में होते हैं। जानवरों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अवशेषों को यूरिया और गुड़ के साथ प्रसंस्करण की आवश्यकता होती है।

2. खाद बनाने के लिए : परंपरागत रूप से खाद तैयार करने के लिए फसल अवशेषों का उपयोग होता है। इसके लिए फसल अवशेषों का उपयोग जानवरों के बिस्तर के रूप में किया जाता है और फिर गोबर के गड्ढे में ढेर कर दिया जाता है। इस भूसे के प्रत्येक किलोग्राम में लगभग 2-3 किलोग्राम मूत्र अवशोषित होता है जो इसे नत्रजन के साथ समृद्ध करता है। एक हेक्टेयर भूमि से चावल की फसल के अवशेष पोषक तत्वों के रूप में लगभग 3 टन खाद के रूप में पोषक तत्वों के साथ समृद्ध होते हैं, जिसका उपयोग फसल उत्पादकता में वृद्धि के साथ-साथ कृषि की लागत को कम किया जा सकता है। इसके अलावा इसे रोटावेटर की सहायता से मिट्टी में मिलाकर भी खाद के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

3. बायोमेथनेशन : इस प्रक्रिया का उपयोग उच्च गुणवत्ता वाली ईंधन गैस बनाने के लिए किया जा सकता है। इसके साथ इससे उच्च गुणवत्ता वाली खाद भी प्राप्त होती है जिसे खेतों में डालने के लिए उपयोग किया जा सकता है। बायोमास जैसे चावल का भूसा, पशुओं के गोबर को बायोगैस टैंक में डालकर मीथेन गैस का उत्पादन किया जाता है जो कि रसोई घर के लिए एक अच्छा व कम लागत वाला ईंधन है ।

4. उद्योगों में उपयोग : पराली का उपयोग विभिन्न उद्योगों जैसे बिजली उद्योग आदि में ईंधन के रूप किया जा सकता है । पराली के केक बनाकर इसे कोयले के दूसरे विकल्प के रूप में आसानी से प्रयोग में लाया जा सकता है। इसके अलावा पेपर और कार्ड-बोर्ड इंडस्ट्री में तथा सेनेटरी वेयर की पैकिंग के लिए भी पराली का उपयोग किया जा सकता है।

फसल-अवशेष प्रबंधन

1. फसल अवशेष जलाने पर प्रतिबंध : फसल अवशेष जलाने को 1981 के वायु अधिनियम, आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 और विभिन्न उपयुक्त अधिनियमों के तहत एक अपराध के रूप में अधिसूचित किया गया था। इसके अलावा किसी भी दोषी किसानों पर जुर्माना लगाया जाना चाहिए। गांव और ब्लॉक स्तर के प्रशासनिक अधिकारियों को प्रवर्त्तन के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

2. पहचान और रोकथाम: रिमोट सेंसिंग तकनीक का एक संयोजन - सैटेलाइट इमेजरी का उपयोग- और स्थानीय अधिकारियों उप-मंडल मजिस्ट्रेट, तहसीलदार, ब्लॉक डेवलपमेंट ऑफिसर, पटवारी और गांव स्तरीय श्रमिकों वाली एक टीम का उपयोग वास्तविक जलने वाली फसल अवशेषों की घटनाओं का पता लगाने व रोकने के लिए जाना चाहिए।

3. फसल अवशेष के लिए बाज़ार की स्थापना : धान के भूसे और अन्य फसल अवशेष के वैकल्पिक उपयोग के लिए मार्गों को बढ़ाने के प्रयास किए जाने चाहिएं। मिसाल के तौर पर धान के भूसे में काफी मात्रा में कैलोरीफुल वैल्यू होता है जो इसे बायोमास आधारित बिजली संयंत्रों में ईंधन के रूप में उपायों के लिए उपयुक्त बनाता है। इसी प्रकार इसका उपयोग बायो-ईंधन, कार्बनिक उर्वरकों और कागज़ और गत्ता बनाने वाले उद्योगों में उपयोग किया जा सकता है।

4. जन जागरूकता अभियान : फसल अवशेष जलने से स्वास्थ्य पर पड़ रहे दुष्प्रभाव को उजागर करने के प्रयास किए जाने चाहिएं। यह विषाक्त कणों का अत्यधिक उच्च स्तर का उत्पादन करता है जो आसपास के लोगों के स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। इसके अलावा फसल अवशेष के वैकल्पिक उपयोग के बारे में किसानों को सूचित करते हुए विभिन्न प्रिंट-मीडिया, टेलीविज़न शो और रेडियो के माध्यम से अभियानों के अलावा किसान शिविरों, प्रशिक्षण और कार्यशालाओं के माध्यम से भी प्रयास किए जाने चाहिएं।

5. फसल अवशेष प्रबंधन प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन : अधिकांश किसान फसलों की प्रबंधन प्रौद्योगिकी के बारे में नहीं जानते हैं इसलिए सार्वजनिक और निजी एजेंसियों के द्वारा जागरूक करके और नवीनतम तकनीकों के प्रदर्शन के द्वारा किसानों को सिखाने में एक बड़ी भूमिका निभाई जा सकती है। इससे इस मुद्दे को संभालने के लिए किसान के प्रबंधन कौशल और ज्ञान में सुधार होगा।

6. कृषि-उपकरणों पर सब्सिडी : राज्य सरकारों को केंद्र के सहयोग से, यांत्रिक उपकरणों पर सब्सिडी प्रदान करने के लिए योजनाएं शुरू करनी चाहिएं ताकि फसल अवशेषों को मिट्टी में बनाए रखा जा सके जो मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाने में मदद करेगी। इसके अलावा जिन-जिन कृषि यंत्रों पर सब्सिडी उपलब्ध हो उसके बारे में किसान को पूर्ण रूप से अवगत कराया जाना चाहिये ताकि वो इन सब्सिडियों का पूरा फायदा उठा सके और अपनी फसल व उनके अवशेषों का सुचारु रूप से प्रबंधन कर सके ।

7. फसल-विविधीकरण : फसल तकनीकों के विविधीकरण पर विभिन्न दीर्घकालिक प्रयास चल रहे हैं जिससे फसल अवशेष जलने को प्रभावी ढंग से रोका जा सकता है। इन्हें वैकल्पिक फसलों की खेती (चावल/धान और गेहूं के अलावा) के माध्यम से कम किया जाना चाहिए जो कम फसल अवशेष उत्पन्न करते हैं और फसल चक्रों के बीच अधिक अंतर अवधि होती है। इसके साथ-साथ किसान को विभिन्न फसल चक्रों के लाभ से भी अवगत कराया जाना चाहिए ताकि वो इन फसल चक्रों को अपनाने का सही निर्णय लेने में सक्षम हो सके।

चावल और गेहूं की फसल अवशेष जलने के कारण प्रदूषण की समस्या को नीति निर्माताओं और विभिन्न अधिकारियों द्वारा ज़्यादा तवज्जो नहीं मिली है। आंशिक रूप से इस तथ्य के कारण हो सकता है कि चावल और गेहूं अवशेषों का जलाना केवल अक्तूबर, नवंबर और दिसंबर के चयनित महीनों के दौरान होता है।लेकिन इन महीनों के दौरान उत्पन्न हुए प्रदूषण के कारण जन स्वास्थ्य के साथ-साथ क्षेत्र-विशेष का पर्यावरण स्तर भी बुरी तरह प्रभावित होता है।

इसलिए फसल अवशेष जलने के मुद्दे से निपटने के लिए कंबाइन हारवेस्टर जैसे फसलों की कटाई में उपयोग की जाने वाली मौजूदा मशीनरी में सुधार की तत्काल आवश्यकता है। जिससे फसल कटाई के साथ-साथ फसल अवशेषों का भी निपटारा हो सके । इसके साथ-साथ सरकार को नवीनतम मशीनरी जैसे कि हैप्पीसीडर, ज़ीरो टिलेज व स्ट्रॉ बाइंडर पर प्रोत्साहन प्रदान करने की आवश्यकता है। इसके अलावा किसानों की सोच व दक्षता निर्माण भी महत्वपूर्ण पहलू है क्योंकि अवशेष जलाने के बारे में किसानों की सोच में बदलाव के बिना प्रौद्योगिकी बहुत मदद नहीं कर सकती। किसानों को प्रदूषण और मानव स्वास्थ्य के बारे में विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम और अन्य मास मीडिया के माध्यम से अवगत कराना चाहिए। सरकार को विभिन्न क्षेत्रों के लिए फसलों के अवशेषों को बेचने के लिए मंच भी प्रदान करने चाहिएं जिससे किसानों की आय को दो गुना करने में मदद मिले तथा यह समस्या समाधान के साथ-साथ किसान के लिए अतिरिक्त आय उत्पन्न करने में सहायक सिद्ध हो। [

गर्भावस्था के दौरान – क्या न करें

- **सुमित श्योराण, बिमला ढांड़ा एवं कृष्णा दुहन**
मानव विकास और पारिवारिक अध्ययन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गर्भावस्था के दौरान शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के बारे में खास ख्याल और देखभाल की जानी चाहिए। गर्भावस्था के दौरान आहार का खास ख्याल रखना आवश्यक होता है, जिससे जच्चा-बच्चा दोनों ही हृष्ट-पुष्ट रह सकें। लेकिन गर्भवती महिलाओं के साथ अक्सर ये समस्या रहती है कि वे गर्भावस्था में क्या करें और किन से बचें, क्या खाएं और क्या न खाएं। किन पौष्टिक आहार का सेवन करें और किन आहार के सेवन से गर्भवती को बचना चाहिए। उपर्युक्त समस्याओं के संबंध में विवरण नीचे दिया गया है। उदाहरण के लिए :

- भारी वज़न न उठाएं जैसे कि पानी से भरी बाल्टी, सील बट्टा, भारी कुर्सी, बक्सा इत्यादि।
- बहुत देर तक न खड़े रहें। यदि आपको रसोई में बहुत देर तक खड़ा होना पड़ता है तो चाहे तो वहां एक कुर्सी रख लें।
- सीढ़ियों का प्रयोग कम से कम करें। यदि आप भूतल पर नहीं रहती हैं और मज़बूरी में आपको नीचे जाना पड़ता है तो कोशिश करें कि एक ही बार में अपने सारे काम निपटा लीजिए। इसके लिए एक कार्य सूची बना लेना उचित होगा, सीढ़ियां रेलिंग पकड़ कर ही उतरें।
- बाहरी खाना न लें, खासतौर पर जंक फूड, जैस कि पिज्जा, बर्गर आदि, होटलों, शादी, ब्याह इत्यादि में भी न खाएं। इनकी शुद्धता की गारंटी नहीं होती और आपको संक्रमण हो सकता है।
- तला और मसालेदार न खाएं, इनसे गैस, अम्ला या जलन हो सकती है।
- डॉक्टर की सलाह से ही दवाओं का सेवन करें। यहां तक कि छोटी-मोटी बीमारियों के लिए भी अपने आप दवा न लें।
- गर्भावस्था के दौरान कम से कम यात्रा करें।
- गर्भावस्था के दौरान तनावपूर्ण या डरावने धारावाहिक या फिल्म न देखें।
- ऐसा कोई काम न करें जिसमें आपको अत्यधिक तनाव का सामना करना पड़े।
- इस दौरान तंग कपड़े न पहनें।
- कुछ अध्ययनों में पता चला है कि गर्भावस्था के दौरान मोबाइल फोन का अत्यधिक इस्तेमाल होने वाले बच्चे के लिए हानिकारक हो सकता है।
- अकेले न रहें। यदि अकेले रहती हों तो हमेशा अपने मोबाइल को अपने साथ रखें।
- बाथरूम में खड़े होकर न नहाएं और इस बात की पुष्टि करें कि काई आदि जमने से फिसलने का खतरा न हो।
- धूम्रपान कतई न करें और किसी और को भी अपने करीब धूम्रपान न करने दें। अप्रत्यक्ष धुम्रपान से भी बच्चे को खतरा हो सकता है।
- कैफीन का सेवन न करें।
- कुछ मछलियां जैसे कि ट्यूना मछली, इत्यादि में पारा धातु अधिक मात्रा में होता है, इन्हें न खाएं। इनके सेवन से शिशु के मस्तिष्क का विकास प्रभावित हो सकता है।
- पहले तीन महीनों में इन चीज़ों का सेवन न करें। कच्चा चीज़, कच्चा अण्डा, सलाद ड्रेसिंग, कच्ची मछली और सॉस के रूप में संसाधित

(शेष पृष्ठ 26 पर)

वस्त्रों की सजावट: डिज़ाइन एवं तकनीक

- **ज़ेबा जमाल[1] एवं निशा आर्य**
वस्त्र एवं आवरण सज्जा विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

वस्त्रों की सतह को सजाने के लिए कपड़ों पर सुन्दर डिज़ाइन बना कर और रचनात्मक कार्य कर के उन्हें और भी अधिक सुन्दर एवं आकर्षक बनाया जाता है । कपड़े की सतह को सुन्दर बनाने एवं अलंकृत करने के लिए कई तरीकों का उपयोग किया जाता है । इस काम के लिए ज़्यादातर सामान्य चीज़ों को ही इस्तेमाल किया जाता है जैसे लैस, बटन, मोती, सुई, धागा आदि।

परिधानों पर सजावट की तकनीक : फैब्रिक सतह को अलंकृत करने वाली तकनीक इस प्रकार है।

1. कढ़ाई (Embroidery) : वस्त्रों को सुन्दर बनाने के लिए सुई और धागे का प्रयोग करके कढ़ाई करना बहुत पुरानी कला है। इसमें अलग-अलग तरह के सुंदर टांके बनाये जाते हैं। इस हुनर में हमारी गांव की महिलाएं बहुत माहिर होती हैं। यह कला हमारे घरों में पीढ़ियों से चलती आ रही है। कढ़ाई में चार तरह के टांकों का काम होता है जैसे : (1) उठाए गए काम (Embossed Effect), (2) काउच किए गए काम (Couching), (3) भरने के टांके (Filling Stitch), (4) गिने धागे की कढ़ाई (Counting of thread)

2. क्विल्टिंग (Quilting) : क्विल्टिंग मशीन एवं हाथ दोनों से ही की जाती है। इस तकनीक में पुराने एवं न पहनने लायक कपड़ों की परत बनाई जाती है और सबसे ऊपर वाले कपड़े पर सुन्दर डिज़ाइन बना कर धागे से काम किया जाता है। क्विल्टिंग का इस्तेमाल करके बहुत ही सुन्दर चादर, बिस्तर, दुलाई आदि बनाई जाती हैं। अब क्विल्टिंग को और भी आकर्षक बनाने के लिए उसके अंदर कपड़ों के साथ-साथ फोम की भी परत डाली जाने लगी है जिससे की डिज़ाइन में उभार आये और वह आकर्षक लगे।

3. अधिरोपण (Applique work) : एप्लीक में आधार वस्त्र की सीढ़ी तरफ प्रिंट वाले या सादे रंगीन कपड़ों को फूल पत्ती के आकार में सुई धागे से लगाया जाता है। एप्लीक बनाने की डिज़ाइन सबकी अपनी पसंद की होती है। एप्लीक बनाने वाले के हुनर एवं मेहनत का प्रतीक होता है।

4. पैचवर्क (Patchwork) : पैचवर्क का उपयोग ज़्यादातर बिस्तर रजाई और कुशन बनाने के लिए किया जाता है। पुराने कपड़ों के टुकड़ों को अलग-अलग आकार में काट कर जोड़ा जाता है। पैच का आकार बनाने वाले की इच्छा पर निर्भर करता है। ज़्यादातर पैच सरल ज्यामितीय आकारों जैसे चकोर, तिकोना में ही बनाया जाता है क्योंकि इनको जोड़ना आसान होता है।

5. ट्रिमिंग (Trimming) : कपड़ों पर दो प्रकार की सजावट सबसे लोकप्रिय है जैसे :

u *फ्रिंज ट्रिम :* फ्रिंज एक सजावटी कपड़ा ट्रिम है जो वस्त्रों के किनारे पर लगाया जाता है जैसे दुपट्टे के किनारे पर या सजावटी लटकन आदि।

u *सिलाई ट्रिम :* इसे वस्त्रों को सुन्दर बनाने के लिए लगाया जाता है, इनका ज़्यादा इस्तेमाल बटन, रफल एवं उरेब पट्टी में ही किया जाता है।

6. लेसवर्क (Lace work) : लैस में कपड़े को खुले तरीके से बिना जाता है। यह काम मशीन एवं हाथ दोनों तरीकों से किया जाता है। लैस में

[1]शोधार्थी, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

बहुत सुन्दर फूल, पत्ती एवं बूटियां बनाई जाती हैं जो की वस्त्रों की सुंदरता को बढ़ा देती हैं।

7. पाइपिंग (Piping) **:** पाइपिंग एक प्रकार का ट्रिम या अलंकरण है जिसका उपयोग विभिन्न स्टाइल लाइन बनाने के लिए और कपड़ों को अलंकृत करने के लिए किया जाता है। आमतौर पर कपड़े की पट्टी ओरैब पर काटी जाती है और अक्सर इसे गले, आस्तीन, प्रिसेस लाइन, एम्प्रेस लाइन आदि पर लगा कर वस्त्रों को डिज़ाइन किया जाता है।

8. मोती वर्क (Beadwork) **:** मोती एक अन्य प्रकार का अलंकरण है। अलग-अलग तरह की मोतियों को सुई और धागे से कपड़े के ऊपर सुन्दर डिज़ाइनों में लगाया जाता है। मोती लगाते वक़्त मज़बूती का ख़ास ख्याल रखा जाता है जिससे कि बाद में मोती निकल न जाएं।

9. बाटिक (Batik) **:** बाटिक कपड़ों की रंगाई की बहुत पुरानी और लोकप्रिय तकनीक है। बाटिक से डाई किये गए वस्त्र आकर्षक रूप से सुन्दर लगते हैं। बाटिक विधि में गर्म मोम पूरे कपड़े पर लगायी जाती है जिससे कि सारे कपड़े पर डाई का असर न हो एवं अपनी पसंद के हिसाब से कुछ ही जगह को डाई किया जाये।

इन सभी तकनीकों का प्रयोग करके कपड़े को बहुत आसानी से घर पर ही अत्यधिक सुन्दर बनाया जा सकता है। [

(पृष्ठ 25 का शेष)

मांस। इन पदार्थों में कुछ ऐसे जीवाणु होते हैं (जैसे साल्मोनेला, टोक्सोप्लाजमोसिज), जिससे बच्चे में जन्मजात दोष आ सकते हैं।

- u अपने पालतू जानवरों के मल से बचें। उनमें हानिकारक परजीवी हो सकते हैं जो भ्रूण के मस्तिष्क को हानि पहुंचा सकता है।
- u पहले तीन महीने तेज़ गंध के बीच न जाएं, इससे आपको मितली, उल्टी होने की संभावना कम होगी।
- u उछल-कूद बिल्कुल न करें, ऐसी कोई गतिविधि न करें जिसमें गिरने का खतरा हो।
- u बिना डाक्टरी सलाह के कोई व्यायाम न करें।
- u कम न खायें। आप आमतौर पर जितना खाती हैं, उससे अधिक खायें। आमतौर पर एक शिशु को 300 कैलोरी की आवश्यकता होती है, इसलिए कम से कम इतनी कैलोरी और लें। ये भी ध्यान रखें कि कहीं आप आवश्यकता से अधिक तो नहीं खा रही हैं।
- u गरम पानी में भरे स्नान टब में न नहाएं। खासतौर पर पहले महीनों में। इससे शरीर के अन्दर का तापमान बढ़ जाता है, जो बच्चे को बुखार होने जैसा होता है। ऐसा करने से बच्चा जन्म दोष के साथ पैदा हो सकता है।
- u प्यासे न रहें। समय-समय पर पानी पीते रहें। इससे रक्त परिसंचरण सही रहेगा। निर्जलित होने पर समय से पहले प्रसव का खतरा होता है।
- u पेट के बल न सोएं।
- u गर्भावस्था के दौरान एक्स-रे से दूर रहें।

उपयुक्त सुझाव गर्भवती महिला और भ्रूण दोनों की उचित देखभाल करने के लिए नेतृत्व करेंगे और साथ ही इससे किसी भी दुर्घटना से बचने में मदद मिलेगी और सुरक्षित प्रसव होगा। [

एक कदम स्वच्छता की ओर

किसानों की आय दोगुना करने में – आधुनिक कृषि पद्धतियों का योगदान

- **अनिल कुमार मलिक[1], सूबे सिंह एवं सुनील कुमार[1]**
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में खाद्य समृद्धि के बावजूद किसानों की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। इसके दो प्रमुख कारण हैं : पुरानी पद्धति से कृषि कार्य करना तथा संसाधनों का अभाव। भारत सरकार ने वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुना करने का लक्ष्य रखा है, जो कि आधुनिक कृषि पद्धति अपनाए बिना संभव नहीं है। किसानों की आय बढ़ाने के लिए उनका रुझान अधिक उपज और समृद्ध खेती, भूमि की अवस्था, उपलब्ध उपकरण, उन्नत तकनीकी और खेत में विगत वर्ष लगी फसल पर निर्भर करता है। कृषि द्वारा अधिकतम आय अर्जित करने के दो ही उपाय हैं। पहला, उत्पादन को बढ़ाएं एवं दूसरा लागत को कम करें। कृषि की प्रत्येक इकाई का सही समय, सही तरीके से उपयोग करके कृषि की लागत को कम किया जा सकता है। इसके साथ बीज, उर्वरक पौध संरक्षण, रसायनों तथा सिंचाई योग्य जल अपव्यय आदि बातों पर ध्यान देकर किसानों की आय को बढ़ाया जा सकता है। निम्नलिखित सुझावों को अपनाकर किसान अपनी आय को बढ़ा सकते हैं तथा अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार ला सकते हैं ।

अच्छे किस्म के गुणवता युक्त बीजों का प्रयोग

अधिक उत्पादन के लिए अच्छे किस्म के बीजों का प्रयोग अति आवश्यक है। कहते हैं जैसा आप बोओगे वैसा पाओगे इसलिए बीज एक ऐसा आदान है, जिसकी समृद्ध कृषि में काफी अहम् भमिका होती है।

बीजोपचार एवं उचित समय पर बुवाई

किसानों को बीजोपचार अवश्य करना चाहिए, ताकि कम लागत में फसल निरोग रहे। इसके अलावा स्थिति के अनुसार (अगेती/पछेती) किस्में अपनाएं ताकि अच्छी पैदावार हो। अच्छे उत्पादन एवं अधिक पौध वृद्धि के लिए पौधों का उचित समय पर बुवाई करना अति आवश्यक है।

आरंभिक जुताई एवं संरक्षण खेती

आरम्भिक जुताई से बीजों का अंकुरण अच्छा होता है। तथा खरपतवार पर भी नियंत्रण होता है। संरक्षण खेती के अंतर्गत शून्य जुताई, (ज़ीरो टिलेज) बुवाई की एक ऐसी विधि है, जिसमें किसान पूरे खेत को नए सिरे से नहीं जोतता है परन्तु फसल कटाई के बाद बिना जुताई किए उसी खेत में बुवाई कर देता है।

बुवाई करने के नये तरीके एवं बीजों की मात्रा

बुवाई के नये तरीके जैसे बीज ड्रील, यांत्रिक ड्रील, कतार में बुआई इत्यादि द्वारा कम समय में ज़्यादा क्षेत्र पर बुआई की जा सकती है। यांत्रिक ड्रील द्वारा एक दिन में औसतन 12 से 15 एकड़ क्षेत्र में बुवाई की जा सकती है। बीजों की मात्रा कृषि विशेषज्ञ द्वारा बताये गये सुझाव के अनुसार ही होनी चहिए जिससे बीज लागत कम होती है एवं उनका विकास अच्छा होता है।

उचित मात्रा में रासायनिक उर्वरक, जैव उर्वरक का प्रयोग

उर्वरकों का प्रयोग उचित मात्रा में करना चहिए, जिससे फसलों का विकास समान रूप से हो तथा अधिक उपज होने के साथ-साथ लागत भी कम होती है। प्राय: कृषक अधिक पैदावार के लालच में ज़्यादा मात्रा में नाईट्रोजनयुक्त उर्वरकों का प्रयोग करते हैं जो वातावरण को बहुत हानि पहुंचाता है। अधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उत्पादकता पर बहुत

(शेष पृष्ठ 27 पर)

[1]शोधार्थी, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

धान की पराली से जैविक खाद

- **बलजीत सिंह सहारण, जगदीश प्रशाद एवं सरिता रानी**[1]
सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में अधिकतर किसान धान की पराली को आग लगाकर नष्ट कर देते हैं जिससे प्रदूषण बढ़ता है और ज़मीन के लाभदायक जीव जन्तु भी नष्ट हो जाते हैं। यदि किसान धान की पराली से खाद बनायें और खेतों में दस टन प्रति हैक्टेयर के हिसाब से डालें तो इससे ज़मीन की उर्वरा शक्ति बढ़ेगी और किसान को कम रासायनिक खाद डालनी पड़ेगी। जैविक खाद अपेक्षाकृत स्थिर उत्पाद है जो कार्बनिक पदार्थों के बाद परिणाम देता है। फसल अवशेष और पशु खाद-विघटित खाद में आमतौर पर प्रमुख पोषक तत्वों की मात्रा कम होती है। सामान्य तौर पर, कार्बन कम हो जाता है और अन्य पोषक तत्व जैविक खाद के दौरान केन्द्रित होते हैं।

कम्पोस्टिंग फसल के अवशेषों को एक बेहतर जैविक उर्वरक में परिवर्तित करता है। यद्यपि चावल की खाद में जैविक उर्वरक, नाइट्रोजन और फॉस्फोरस जैसे प्रमुख पोषक तत्व अक्सर कम होते हैं, वे अत्यधिक लाभकारी हो सकते हैं क्योंकि, इनमें सूक्ष्म पोषक तत्व, एंजाइम और सूक्ष्म जीव होते हैं जो अक्सर अकार्बनिक उर्वरकों में पाए जाते हैं। चावल का भूसा पोटैशियम से भरपूर होता है।

बनाने की विधि

अच्छी खाद बनाने के लिए नाइट्रोजन, नमी, सामग्री और प्रचुर मात्रा में सूक्ष्म जीव होने आवश्यक हैं। कंपोस्टिंग सबसे अच्छा है जब साइटों को समतल किया जाता है, अच्छी तरह से सूखा, छाया के नीचे, और जब खाद सामग्री छोटे टुकड़ों (3 से 5 सैं.मी.) में कट जाती है।

यदि संभव हो तो, खाद के ढेर को अनाज की फसल सामग्री (उच्च कार्बन और कम नाइट्रोजन सामग्री) से युक्त परतों में बनाया जाना चाहिए जो फलियां या खाद अपशिष्ट (उच्च नाइट्रोजन सामग्री) के साथ संयुक्त है। 2:1 के अनुपात में मिलाएं (अनाज: फलियां/खाद)। कम्पोस्ट ढेर को नम रखा जाना चाहिए-बहुत गीला नहीं (जैसे, खाद ढेर से निकलने वाला पानी नहीं) और न ही अधिक सूखा। अपघटन में सहायता के लिए, अपने खाद के ढेर को क्षय सामग्री (जैसे गोबर का घोल, गोमूत्र), नाइट्रोजन उर्वरक (जैसे यूरिया) और/या सूक्ष्म जीव के साथ छिड़कें। ऐसे योजक वांछनीय है क्योंकि उनमें नाइट्रोजन और/या सूक्ष्म जीव होते हैं जो अपघटन में सहायता करते हैं। कई किसान पका कम्पोस्ट ही निर्माण करते हैं और फिर उन्हें बस खड़े होने देते हैं, लेकिन हर दो सप्ताह में ढेर को मिलाना और मोड़ना सबसे अच्छा है। जब नमी और तापमान की स्थिति अच्छी होगी, तो खाद 4-8 सप्ताह में तैयार हो जायेगी।

खाद के फायदे

खाद में सूक्ष्म पोषक तत्वों और सूक्ष्मजीवों की एक शृंखला होती है जो फसल के विकास और मिट्टी के स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद होते हैं, और आमतौर पर अकार्बनिक उर्वरकों में निहित नहीं होते। कम्पोस्टिंग पोषक तत्वों को केन्द्रित करता है। खाद में पोषक तत्व धीरे-धीरे जारी होते हैं और लीचिंग द्वारा खो जाने की संभावना कम होती है। कम्पोस्टिंग (55° सैं.ग्रे. से ऊपर) में उत्पन्न उच्च तापमान, रोग जनकों के स्तर को कम रखते हैं और खाद सामग्री में निहित खरपतवार बीजों की व्यवहार्यता को कम करते हैं। एक बार जब खाद उपयोग के लिए तैयार हो जाती है, तो इसे संभालना आसान है (यह काफी स्थिर है और इसमें बहुत कम गंध होती है)। जैविक कचरे खेतों में व्यापक रूप से उपलब्ध हैं। मृदा जल का संरक्षण अधिक होता है। पौधों की जड़ों के लिए उचित वातावरण बनता है और इनकी वृद्धि भी बहुत अच्छी होती है। यह प्रक्रिया प्रदूषण रहित भी होती है। कम्पोस्ट खाद की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए रॉक फॉस्फेट डालकर इसकी फॉस्फोरस युक्त कम्पोस्ट भी तैयार की जा सकती है। इसके प्रयोग से जैविक पदार्थ की मात्रा भी बढ़ जाती है।

खाद की सीमाएं

जैविक कचरे को एकत्र करना और जमा करना, खाद के ढेर को बदलना और खेत में खाद फैलाने के लिए बहुत अधिक श्रम की आवश्यकता हो सकती है। किसानों को उच्च पैदावार प्राप्त करने के लिए पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व प्राप्त करने के लिए बहुत अधिक खाद डालने की आवश्यकता हो सकती है। अधिक उपज देने वाली फसलों के लिए, अकार्बनिक उर्वरकों की आवश्यकता आमतौर पर खाद के रूप में होती है। आमतौर पर कम्पोस्ट में केवल 1/20वीं से 1/30वीं आम अकार्बनिक उर्वरकों की नाइट्रोजन होती है।

खाद के सभी पोषक तत्व आवेदन के वर्ष के दौरान फसलों के लिए उपलब्ध नहीं होता हैं। [

(पृष्ठ 26 का शेष)

ही बुरा प्रभाव पड़ता है, इसलिए अब किसानों को अधिक जैविक उर्वरकों जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, केंचुआ खाद, इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए जिससे मृदा की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है।

उन्नत सिंचाई का प्रयोग

फव्वारा सिंचाई, टपका सिंचाई इत्यादि विधियों का प्रयोग करके किसान समय, श्रम एवं पानी की बचत कर सकता है। सीमित जल की उपलब्धता के तहत वैकल्पिक फसल प्रणाली का प्रयोग करना हमेशा लाभदायक रहता है।

समेकित खेती प्रणाली

किसान कृषि के साथ-साथ डेयरी, मत्स्यपालन, वानिकी, मुर्गीपालन रेशम उत्पादन इत्यादि को अपनाकर अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं।

कटाई, छंटाई एवं भण्डारण

उचित समय पर फसलों की कटाई करके किसान अधिक मूल्य अर्जित कर सकते हैं क्योंकि सही समय पर कटी फसल सही तरीके से पक जाती है तथा उसको सुखाने, संरक्षित करने का खर्च भी बच जाता है। उत्पाद को अलग- अलग श्रेणियों में छांटकर बेचना लाभदायक होता है। कई बार अनुचित भंडारण के कारण फलस्वरूप् अच्छा मूल्य नहीं मिलता। अत: कृषि उत्पादों की समुचित भंडारण की व्यवस्था आज की ज़रूरत बन गई है।

प्रसंस्करण

स्वयं सहायता समूह, उत्पादक समूह, कृषक समूह आदि बनाकर किसान भाई स्वयं अपने उत्पादों का प्रसंस्करण कर सकते हैं। प्रसंस्करण से न केवल कृषि उत्पादों की आयु बढ़ती है बल्कि उत्पाद के मूल्य में भी वृद्धि होती है।

फसल बीमा योजना

फसल बीमा योजना एक अति महत्वपूर्ण योजना है जिसको अपनाकर किसान प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले नुकसानों की भरपाई कर सकते हैं। साथ ही अपनी आमदनी को सुरक्षित कर सकते हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त नई तकनीकियों को अपनाकर किसान अधिक से अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही कृषि आधारित व्यवसायों को स्थापित कर ग्रामीण परिवेश में रोज़गार का सृजन भी कर सकते हैं। [

[1]सस्य विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

तिल – शरीर सृजनहार

- नीता कुमारी, संगीता सी. सिंधु एवं प्रदीप कुमार चहल[1]
खाद्य एवं पोषण विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

तिल *पेडालियेसी* परिवार का प्रमुख सदस्य है। आयुर्वेद में तेल का प्रमुख एवं श्रेष्ठ स्रोत तिल माना गया है। तिल से ही तेल बना है। शरीर एवं मस्तिष्क, हृदय एवं नाड़ी को बल प्रदान करने वाला होता है - तिल। इसके तेल में पॉली तथा अनसेचुरेटेड फैटी एसिड अधिक होते हैं जो रक्त कोलेस्ट्रोल एवं बीटा लाइपोप्रोटीन पर नियन्त्रण रखते हैं। तिल मूत्राशय एवं प्रजनन अंग के स्वास्थ्य संरक्षण तथा उनके विभिन्न रोगों को दूर करने में उपयोगी है। काला तिल जिसे रामतिल भी कहा जाता है, इसमें लोहा सर्वाधिक 56.6 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम होता है। इसलिए यह रक्तहीनता के रोगी के लिऐ बेहद उपयोगी है। इसको भून कर अथवा अंकुरित कर गुड़ के साथ भी खा सकते हैं। लड्डू भी बनाकर खा सकते हैं।

तिल में लेसिचिन, लोहा विटामिन 'ई', 'बी' तथा 'सी', संपूर्ण प्रोटीन एमिनो एसिड, उत्तम किस्म का फॉस्फोरस पर्याप्त मात्रा में होता है। इस दृष्टि से यह स्नायविक रोग, रक्तहीनता, स्मरण शक्ति ह्रास, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप के लिये अति उपयोगी है। पोषण एवं रोग निवारण की दृष्टि से तिल का अंकुरण ही श्रेष्ठ है। सफेद तिल में फास्फोरस-575 मिलीग्राम तथा 100 किलोग्राम अत्यधिक होने से यह स्नायु-संस्थान, लकवा ग्रस्त रोगियों तथा विकासशील बच्चों के लिये श्रेष्ठ आहार है। यह स्नायु-कोशिकाओं के निर्माण में सहयोग करता है। इसमें अच्छे किस्म का प्रोटीन भी मिलता है। उदरशूल की स्थिति में 15 ग्राम तिल को खूब चबा चबा कर खायें। तिलों को पीस कर गर्म कर गोला बनायें। उदरशूल पर रखें तो आराम मिलता है।

मूत्र प्रदाह, सूजन तथा पेशाब में पस सेल्स आने की स्थिति में 15 ग्राम तिल तथा 15 ग्राम देशी खांड को पीसकर सोयाबीन या गाय के कच्चे दूध के साथ खायें, फायदा मिलेगा। 35 ग्राम पुष्ट तिल को 12 घंटे पानी में भिगोकर पुन: उसे 12 घंटे गीले कपड़े में बांधें। अंकुरित होने पर पीस कर या चबा कर खाने से मस्से तथा रक्तार्श, रक्तहीनता, प्रसव वेदना, दृष्टि दोष, पथरी आदि रोग ठीक होते हैं। काले तिल को भून कर गुड़ के साथ लड्डू बनायें। प्रतिदिन दो लड्डू खाने से दांत के रोग, बहुमूत्र, वात रोग रक्तहीनता, वीर्यपात, प्रमेह, गले की सूजन आदि रोग ठीक होते हैं। 100 ग्राम तिल, 15 ग्राम अजवाइन तथा 50 ग्राम गुड़ मिलाकर 10 लड्डू बनायें। प्रतिदिन रात्रि को 1-2 लड्डू खाने से प्रमेह, प्रोस्टेट जन्य, विकार, बहुमूत्र, बिस्तर पर पेशाब करना आदि मूत्र सम्बन्धी रोग ठीक होते हैं।

यह उत्तम पौष्टिक आहार है। इसमें शरीर स्वस्थ एवं शक्तिशाली बनता है। इसके चूर्ण को मक्खन के साथ खाने से अर्श ठीक होता है और तिल के पत्तों की पीसकर जीर्ण भयंकर फोड़े पर बांधें तो आराम मिलता है। इसके पत्तों से सिर के बालों को धोने से बाल चमकीले, स्वस्थ एवं घने होते हैं। तिल के पौधों में विशेष प्रकार की रोगाणुनाशक गंध होती है। इसके पौधों के पत्ते को बिस्तर के नीचे रखने से खटमल समाप्त होते हैं।

माँ का दूध बढ़ाने के लिए, माहवारी चक्र को ठीक करने के लिए, मंदाग्नि कोष्ठबद्धता, स्नायविक कमज़ोरी, कोध्र, उत्तेजना, अनिद्रा, स्मरण शक्ति ह्रास की स्थिति में तिल का भरपूर प्रयोग करें। शाव प्रकाश निघंटु के अनुसार तिल कटु, स्वादिष्ट, कफ-पित्तनाशक, बल्य, व्रण, त्वचा व बालों के लिये, स्पर्श में शीतल, दुग्धवर्धक, दांतों के विकार को दूर करने वाला तथा बुद्धि बढ़ाने वाला होता है। सफेद तथा अन्य तिलों की अपेक्षा काला तिल सर्वश्रेष्ठ है। [

[1]विस्तार शिक्षा विभाग, कृषि महाविद्यालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

पॉली हाऊस लगायें – आमदनी बढायें

- जगत सिंह, मीना सिवाच एवं विजयपाल पंघाल[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पॉली हाऊस वह आकृति है जो बाँस या लोहे के बने ढाँचे पर विशेष प्रकार की पॉलीथीन शीट ढककर बनाई जाती है। इनको बनाने में आने वाली लागत तथा वातावरण पर नियन्त्रण की सुविधा के आधार पर पॉली हाऊस तीन प्रकार के होते हैं :

कम लागत वाले साधारण पॉली हाऊस

इनमें वातावरण को नियन्त्रित करने के लिये किसी यन्त्र का प्रयोग नहीं किया जाता है।

मध्यम लागत वाले पॉली हाऊस

इनमें तापमान को नियन्त्रित करने के लिये साधारण यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है।

अधिक लागत वाले अति तकनीकी पॉली हाऊस

इनमें वातवरण (तापमान, प्रकाश, आर्द्रता व वायु संचालन) स्व-नियन्त्रित होता है। इसके लिये अति आधुनिक तकनीक का प्रयोग किया जाता है। ढांचे की बनावट के आधार पर पॉली हाऊस कई प्रकार के होते हैं। जैसे - झोंपड़ीनुमा, गुफानुमा, गुम्बदाकार आदि।

सब्जियों का चुनाव

बे-मौसमी उत्पादन के लिये वही सब्जियां उपयुक्त होती हैं जिनकी बाज़ार में मांग अधिक हो और वे अधिक भाव पर बिक सकें। इन सब्जी फसलों में टमाटर, खीरा, शिमला मिर्च आदि प्रमुख हैं। इनमें बे मौसमी नर्सरी भी तैयार की जा सकती है। पॉलीहाऊस में उगाई गई फसलों की गुणवत्ता भी अच्छी होती है। पॉली हाऊस से फसलों को अधिक वर्षा से होने वाले, नुकसान से भी बचाया जा सकता है। मई-जून के महीनों में पॉलीहाऊस में कोई फसल न उगायें तथा इस दौरान मिट्टी का सौर ऊर्जा से उपचार करें। पॉलीहाऊस में फसलों की बे मौसमी पौध/नर्सरी तैयार करके बाहर खेत में अगेती पैदावार लेकर अधिक कमाई की जा सकती है।

सस्य क्रियाएं एवं देखभाल

खुले खेत में अपनाई जाने वाली सभी सस्य क्रियाएं पॉलीहाऊस के अन्दर अपनाई जाती हैं। गोबर की खाद (14 टन प्रति एकड़) का भरपूर उपयोग किया जाना चाहिए। प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौधों की संख्या बढ़ाकर पौधों की छंटाई व ट्रेनिंग द्वारा बेलवाली सब्जी फसलों से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। पॉलीहाऊस में टपका सिंचाई विधि के साथ पलवार (मल्च) का प्रयोग करके कम पानी से अधिक पैदावार लेकर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। पॉली हाऊस के अन्दर 1.0 मी. चौड़ी व 0.15 मी. ऊंची बैड बनाई जाती है जिनकी लम्बाई आवश्यकतानुसार रखी जाती है। बैड से बैड की दूरी 70 सैं.मी. से कम नहीं होनी चाहिए। एक बैड पर 60 सैं.मी. की दूरी पर दो लाईन बनाई जाती हैं। लाईन में पौधों के बीच की दूरी 50 सैं.मी. होनी चाहिए। [

[1]सब्जी विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

Wheat Diseases and their Management

- **Rajender Singh and H. S. Saharan**
Department of Plant Pathology
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Wheat is an important food grain crop of rabi season in Haryana. For good crop harvest, quality seed, application of balance fertilizers, irrigations and other plant protection measure are pre-requisite. Wheat suffers from a number of diseases like rusts, smuts, bunts and powdery mildew, etc. Hence, it is essential to know about disease symptoms and their management.

1. Loose smut : It occurs throughout the state in almost all commercially grown wheat varieties and causes yield losses. The disease is noticed at or after ear emergence when black powdery ear heads appear from infected plants. In smutted spikes, all the spikelets are filled with black powdery mass of spores. The spores from diseased ears are blown away by the wind and cause infection at the anthesis stage of the crop to the developing grains in the healthy ear heads and pathogen gets established in the embryo of seed. Such internally infected seed apparently looks healthy serves as a source of inoculums for the disease during next crop season. It has been observed that at boot stage the flag leaf of infected tillers shows characteristic yellowing or tip drying which always starts from the top. The flag leaf yellowing or tip drying of infected tillers can easily be recognized in the field from a distance and such tillers/plants can be rouged out to control the secondary spread of the disease. Loose smut can be managed by following ways :

- Treat the seed with systemic fungicides i.e. Tebuconazole 2DS @ 1 g/kg or carboxin or carbendazim @ 2 g/km seed.
- Rogue out the diseased plants as soon as observed and destroy them by burning or burying in the soil.
- *Durum* wheat varieties viz., WH 896 and WH 912 are resistant to loose smut.

2. Flag smut : The disease is more pronounced in light and sandy soils of Bhiwani, M.Garh, Rewari, Hisar, Sirsa, Rohtak and Ambala (Naraingarh tehsil) districts of the state. The disease can cause heavy losses if susceptible varieties are taken in the infested fields year after year continuously.

Symptoms of the disease are produced on leaf, leaf sheath, culms and ear heads but leaf and leaf sheath are more commonly affected. Long narrow lead gray or black streaks or stripes running parallel to the veins are formed on leaf and other affected plant parts. These stripes are initially covered with epidermis which later ruptures and expose black sooty mass of the fungus spores. The affected leaves become twisted and drooping (flagged). Later, the shredding of diseased leaves also takes place. The spikes emerged on the affected tillers remain sterile bearing no grains and if grains formed they are shrivelled with very poor viability. The pathogen can survive in soil and disease plant debris for many years. This disease can be managed by following ways :

- Seed treatment with Tebuconazole 2DS @ 1g/kg or carboxin or carbendazim @ 2g/km seed.
- Rogue out diseased plants and destroy by burning.
- Grow resistant varieties viz., WH 283 and WH 896 in infested fields year after year.

3. Karnal bunt : The disease has international importance and strict quarantine has been imposed by countries where it is not known. Its permissible limit at international level is zero per cent.

Karnal bunt disease in the wheat seeds/ grains is observed only after threshing of the wheat crop and there is no symptom of the disease in the standing crop. The disease grains are generally, partially or sometime wholly converted into black powdery mass enclosed by pericarps of the seed. Freshly harvested diseased grains emit fishy rotten smell. During threshing the pericarp of the diseased grain is ruptured and the exposed fungus spores stick to the surface of the healthy seeds which helps in build up of disease inoculums in the field. The flour prepared from seed lot having more than five per cent bunted grains imparts fishy odour, blackish colour of flour and makes it unfit for human consumption. The pathogen is seed as well as soil borne and infection takes place at anthesis stage of the crop by secondary sporidia through wind currents. The disease can be managed by following ways:

- Seed treatment with Tebuconazole 2DS @ 1g/kg seed or thiram @ 2g/kg seed for seed borne inoculum.
- Avoid cultivation of highly susceptible varieties like WH 147, PBW 343 and HD 2329 in disease prone areas or infested fields.
- Grow resistant / tolerant varieties i.e. WH 283, Raj 3765, PBW 502, WH 896 and WH 912.
- Follow 2-3 years crop rotation with non-host crop.
- Seed production programme should be taken in less disease prone areas.

4. Brown or leaf rust : Brown coloured lesions or pustules are formed on leaf and leaf sheath. The pustules are scattered throughout the leaf areas. The disease is generally observed in the second

fortnight of February or 1st week of March. Disease intensity increases with growth stages of the crop. Grains are usually light and shrivelled depending on disease severity. Brown rust can be managed by the following ways :

- Grow resistant tolerant like WH 1184, WH 1105, WH 896, WH 912, RAJ 3765, WH 283, WH 1142 and WH 1124.
- Spray mancozeb or zineb @ 2kg per ha on the first appearance of disease symptoms and repeat 2-3 sprays at 10-15 days interval.

5. Yellow or stripe rust : Disease is recognized by the presence of linear chains of yellow rust pustules formed on leaf. The yellow rust causes server losses if it appears in early seedling stage of the crop. In severe attack yellow pustules are formed on glumes of ear heads and even on the awns. Disease usually appears during the month of January when average temperature is between 11-15° C. The yellow rust can be managed by following ways:

- Grow resistant varieties like WH 1184, WH 1105, WH 1142, WH 1124, WH 283 WH 896, WH 912 and Raj 3765.
- Spray mancozeb or zineb @ 2 kg/ha at the appearance of the disease symptoms and repeat 2-3 sprays at an interval of 10-15 days or spray of propiconazole @1ml/litre of water or 200 ml in 200 litres of water per acre on just appearance of diseased symptoms.

6. Powdery mildew : Scattered masses of powder like symptoms appear on the leaf. The disease progresses from lower leaves to upper leaves. Leaf dries in severe attack and even the development of ear heads is adversely affected and grains formed are shrivelled and lighter in weight. The disease is more common in irrigated areas, namely, Ambala, Karnal, Kaithal, Kurukshetra and Yamunanagar districts of the state because of the high humidity. Powdery mildew can be effectively managed by following ways:

- Grow resistant/tolerant varieties viz. WH 283, WH 542, WH 896 and WH 912.
- Spray of soluble sulphur @ 2-2.25kg/ha in 400-500 litres of on appearance of diseased symptoms.
- Avoid late sowing of timely sown varieties. [

Happy Seeder : Operating Instructions

- **Pooja Rani, Sube Singh[1] and Anil Saroha[2]**
Krishi Vigyan Kendra, Hisar
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

To sow wheat in time, the burning of rice residues is a common practice in North India, specially in Punjab, Haryana, Delhi and Uttar Pardesh. This burning decreases soil fertility and is harmful to humans, animals and the environment. With the combustion of rice residues, harmful gases are produced which create very dangerous situations for our environment. From the whole amount of nutrients absorbed from soil, 25% nitrogen and phosphorus, 50% sulphur and 75% potash is preserved in roots, stems and leaves of plant, hence, the crop residues are storehouse of nutrients. If these residues get incorporated in soil, they can improve soil fertility. Thus, an approach of in-situ residue management is the best in terms of soil health management and environment protection.

Happy Seeder is the most effective tool for sowing wheat in rice residues without burning and is capable of drilling wheat seeds directly into the fields with residual surface retention and without any soil disturbance. This technology is eco-friendly and also saves water.

Key Features of Turbo Happy Seeder :

- Possibility of sowing wheat crop just after rice harvesting i.e. option for long duration wheat and rice varieties.
- Possibility of sowing wheat in the residual moisture i.e. saving of one irrigation.
- Timely sowing of wheat even after long duration basmati rice varieties.
- Crop residue helps in moisture and temperature conservation.
- Improved soil health.
- Environment friendly technology to check air pollution.

However, one of the major constraints in the large-scale adoption of this technology is the lack of skills or knowledge about the operation, calibration and maintenance of the machinery. There are different field situation specific adjustments needed before using the machine in the field. These adjustments include sowing depth, fertilizer rate and seeding rate, etc., depending on crop and field conditions to realize the potential benefits of the technology. So, some operating notes are there which will be helpful for farmers.

Operating Instructions for Turbo Happy Seeder :

There are some instructions to ensure before, during and after use of happy seeder for proper functioning of machinery :

[1]Direcorate of Extension Education, CCSHAU, Hisar
[2]Dept. of Farm Machinery & Power Engineering, CCSHAU, Hisar

Before Wheat Sowing :

- The field should be properly levelled before transplanting rice crop.
- Distribute the free residues evenly over the residues anchored across the field so that the tailings load becomes uniform across the field.
- In the early morning, wet residues (due to moisture from the atmosphere and soil surface) tend to clog the machine. Therefore, the happy seeder can be used after sufficient evaporation of the residue moisture.
- Ensure that the moisture content of the soil at planting time is optimal and uniform in order to have a uniform crop. The moisture content of the soil is critical to machine operation, as excessive soil moisture can uproot anchored residues, then obstruct the machine and low soil moisture affects the germination of wheat.
- Check the condition of the drill and make the necessary adjustments or repairs. In particular, fasteners, blade bolts and welds before operating. Replace broken or worn parts.
- Select the appropriate row spacing, seed quantity and depth based on field and crop.
- Add the seed to the seed box. Do not fill the seed box more than three-quarters to avoid buckling of the seed box.
- Do not mix the fertilizer with seeds when sowing, as this will damage the seed metering device. Make sure the fertilizer is free of clumps.

During Wheat Sowing Operation :

- Use a double-clutch tractor to operate the machine in the field. Tractors of 45-55 hp are enough to operate a 9 to 12 tyne happy seeder. Use the double clutch lever to reduce the forward speed of the tractor to eliminate occasional accumulations of residue during machine operation.
- Engage the tractor PTO gear, set the tractor engine to 1800-2000 rpm and operate the tractor at 1st low gear or 2nd low gear depending on the residual load on the ground.
- Ensure optimal depth of planting by adjusting the depth control wheel. Raise a happy seeder while turning on the headland without disengaging the PTO. Adjust the top link of the machine to keep the machine upright during field operation.

After Wheat Sowing Operation :

- Cleaning of machine parts must be done after use, i.e. The seed box, fertilizer box, dosing mechanism, seed tubes, furrows, window drums, ground wheels, etc. should be cleaned and washed at the end of the season.
- After drying the planter, grease all bearings, points, chain and sprockets.
- Store the planter in a cool and dry place. [

Quality Seed to Raise Socio-economic Standard of Farmers

- **Sunil Kumar, Anil Kumar Malik[1] and S. S. Jakhar**
Department of Plant Pathology
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

The new agricultural technology introduced during the mid-sixties helped our country to achieve self-sufficiency in food grain production. Considering the study up-trend in the growth of population self sufficiency in the production of food grains and edible oils is not a small achievement. It would not be an exaggeration to say that the green revolution in the country emerged from new seeds. Seed is a vital Input and a dynamic instrument for increasing agricultural production. Farmers in India have known the value of good seed since time immemorial and have been contributing for the improvement of seeds through the process of selection and cultivation. Quality seed production is a specialized activity and the farmer's custom of retaining a portion of crop production as seed cannot act as a substitute for quality seed. Since the practice generally lacks the expertise to segregate seeds of genetic vigour and it is unable to avoid poor germination.

Seed quality describes the potential performance of a seed lot. Trueness to variety; the presence of inert matter, seed of other crops, or weed seed; germination percentage; vigor; appearance; and freedom from disease are important aspects of seed quality. High-quality seed lots should meet minimum standards for each of these characteristics. The standards of official certification agencies are usually accepted as the minimum requirements for high-quality seed.

The need for quality seed have been recognized by the Government of India long ago and several Research Stations have been set up under the Indian Council of Agricultural Research (ICAR) for the improvement of seed quality. Apart from this, State Agricultural Universities have also undertaken breeding programmes for achieving the crop improvement of all major crops grown in their respective areas of operation. The National Seeds Corporation (NSC) was set up in 1963 to produce foundation seeds of prominent crops and the organization has over the years risen to the role of leader in the country in developing the seed industry on a large scale. The Seed Act was legislated in 1966 to maintain the purity of seed and to regulate the quality of seeds sold in the market for commercial cultivation. In 1976, the National Seed project (NSP) was launched and the seed production process was decentralized. State Seed Corporations have been set up under the NSP in the respective state for the multiplication and distribution of certified seeds. Many private

companies, national as well as multinational, have also taken up seed development, multiplication and distribution programmes all over the country.

Despite many progressive steps taken by the Government and the private organizations, the production and distribution aspect aspects of quality seed has been far from satisfactory and has been resulted in a supply gap of seed in the country. This inability of seed industry to supply quality seeds in proportion to the demand has resulted in the proliferation of spurious seeds. There are instances of supplying commercial grain as seed by the merchants in Haryana leading to huge economic losses to the farmers resulting in suicide and deaths of the many farmers.

There is necessity in the country to go for demanded projections for various seeds. An estimation of demand for seeds of different crops is a complex exercise at the best because of the unpredictable deviations in the farmers' preferences for crops each year. The farmers' seed demand have been observed to vary sharply following their crop selection which in turn is governed by many factors.

Benefits of Using Quality Seeds :

- They are genetically pure (true to type)
- The good quality seed has high return per unit area as the genetic potentiality of the crop can be fully exploited
- Less infestation of land with weed seed/other crop seeds
- Less disease and insect problem
- Minimization of seed/seedling rate i.e., fast and uniform emergence of seedling
- They are vigorous, free from pests and disease
- They can be adopted themselves for extreme climatic condition and cropping system of the location
- The quality seed respond well to the applied fertilizers and nutrients
- Uniform in plant population and maturity
- Crop raised with quality seed are aesthetically pleasing
- Good seed prolongs life of a variety
- Yield prediction is very easy
- Handling in post-harvest operation will be easy
- Preparations of finished products are also better
- High produce value and their marketability

Taking all these things into consideration, the Government should revitalize its machinery to estimate the demand projections and to produce and supply the good seeds of various crops to the farmers at right time, at his door step at reasonable prices. It should have a thorough and strict check over the production of quality seeds by the private agencies and sale of the same by the dealers to the farmers. If this is done, the farmers' problems will be solved to a great extent and no doubt, it can improve farmers' social-economic life. [

Quality Seed Production of Wheat

- **Y. P. S. Solanki, Meena Siwach and Jagat Singh**
Krishi Vigyan Kendra, Rohtak
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Quality seed has been recognised as one of the vital inputs in increasing the agricultural production. Experiments have shown that 10-15% yield of wheat can be increased only by using the quality seed. But the farmers face a lot of difficulties in getting quality seed every year. Either they do not get desired quantity of seed or they have to spend a lot of time and money for procuring such seed. Therefore, all the farmers are unable to procure it. If a farmer takes some care, he can avoid both these problems to a large extent by producing quality seed of a variety himself. Wheat is a self-pollinated crop and it is very easy to maintain its purity. Once the certified seed is purchased by the farmer from certifying agencies like Agricultural Universities, Seeds Development corporations and National Seeds Corporations, etc., the farmer can maintain it for a number of years without an appreciable decrease in its genetic purity and potentiality.

The quality seed should meet the following requirements : purity of seed (not less than 98%); Inert material (not more than 2%); other crops seed (not more than 0.10%); weed seeds (not more than 0.10%); objectionable weeds (not more than 5%); germination (not less than 85%); moisture (not more than 12%).

The main points for producing quality seeds are: u Grow the certified seed in a good fertile field where irrigation facilities are available and it is free from weeds and other crop plants : u Before sowing, the seed should be treated with Vitavax/Bavistin @ 2g per kg of seed to insure the control of loose smut, u The sowing should be done at normal time and in lines, u The seed rate should be reduced to facilitate the proper roguing, u The application of irrigation and fertilizers according to package of practices is essential to harvest good yield and well filled grains, u The hoeing and weeding should be done well in time. If some weeds like Hiran Khuri and Phalaris minor are present in the crop, they should be removed before maturity, u The off-type plants should be removed as and when noticed, u The smutted plants should be removed carefully and burried in the soil much away from the field, u If the field, which is selected for producing seed is not having wheat crop on either side, the whole field should be harvested. But if the field is surrounded by other wheat variety, then a strip of three meter from all sides of the field should be harvested separately. The remaining crop should be harvested and threshed separately in a well cleaned thresher, u After threshing, small, broken and shriveled seeds should be separated with the help of a sieve. The bold seeds should be dried well before storing in the bins, and u For storing celphos may be used to avoid the attack of weevilsm etc. [

हरियाणा खेती एवं अन्य प्रकाशनों में विज्ञापन हेतु विज्ञापन दरें

पृष्ठ	साधारण (रु०)	छः या छः माह से अधिक समय के लिए विज्ञापन दर (रु०)	रंगीन विज्ञापन दर (रु०)
चौथा कवर पृष्ठ	2500/–	2400/–	6000/–
दूसरा कवर पृष्ठ	2400/–	2300/–	5800/–
तीसरा कवर पृष्ठ	2300/–	2200/–	5500/–
साधारण पृष्ठ	2000/–	1900/–	4700/–
आधा पृष्ठ	1200/–	1100/–	–

लिफाफे का मुख पृष्ठ	–	आकार 9 सैं.मी. × 11 सैं.मी.	4000/–
पिछला पृष्ठ	–	आकार 18 सैं.मी. × 22 सैं.मी.	4000/–

जी.एस.टी. - विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार।

विज्ञापन देने हेतु निम्न पते पर संपर्क करें :

प्रकाशन अनुभाग

गांधी भवन

चौ. च. सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

हिसार (हरियाणा)

फोन : 01662-255234